प्रेम-परीक्षा

ठाकुर श्रीनाथसिंह

'गृहलक्ष्मी'-ग्रन्थमाला—सं० ३२

प्रेम-परीक्षा

स्त्री-शिक्षा से परिपूर्ण अत्यन्त शिक्षाप्रद,
सामाजिक और मौलिक
उपन्यास।

लेखक

'तरुण तपस्विनी', 'क्षमा', 'सतीपद्मिनी' और 'बालकवितावली'
आदि पुस्तकों के रचयिता तथा भूतपूर्व
'दैनिक देशबन्धु'-सम्पादक

ठाकुर श्रीनाथसिंह

प्रकाशक

पं० सुदर्शनाचार्य्य बी० ए०,
'गृहलक्ष्मी'-कार्य्यालय,
प्रयाग।

प्रथम संस्करण } सं० १९८६ वि० { मूल्य १=)

पुस्तक मिलने का पता—

व्यवस्थापक

'गृहलक्ष्मी'-कार्यालय,

प्रयाग ।

——— :o: ———

——— :o: ———

मुद्रक—

पं० सुदर्शनाचार्य्य, बी० ए०

सुदर्शन प्रेस,

प्रयाग ।

पूज्य पितृवर

[illegible]र कामता प्रसाद सिंह

(मानपुर, बारा, इलाहाबाद)

के

चरण कमलों में

अत्यन्त श्रद्धा, भक्ति और विनीत भाव

से सादर समर्पित

श्रीनाथसिंह

दो शब्द

———:o:———

मेरे पहले उपन्यास 'क्षमा' को अधिकाधिक संख्या में अपना कर प्रेमी पाठक मुझे उत्साहित न करते तो शायद यह उपन्यास न लिखा जाता। किन्तु कुछ ऐसे भी सज्जन सुनने में आए हैं जो 'क्षमा' से बुरी तरह भड़क उठे हैं। मेरा खयाल है कि ये उन संकुचित हृदय वालों में से होंगे जो समाज में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं चाहते। ऐसे लोगों के लिये यह उपन्यास नहीं लिखा गया।

हिन्दी में ऐसा उपन्यास शायद एक भी नहीं है जिसको पढ़कर स्त्रियों में आत्मरक्षा का भाव जागृत हो। पौराणिक और ऐतिहासिक कथायें ऐसी अवश्य मिलेंगी पर आज कल की स्त्रियों को उनसे कोई व्यवहारिक शिक्षा मिल सकती है या नहीं इसमें मत भेद है। इस दृष्टि से मैं इस उपन्यास को स्त्री-शिक्षा सम्बन्धी जितने उपन्यास निकले हैं उन सब से अच्छा और आवश्यक कहूँ तो इसमें सन्देह नहीं कि यह अतिशयोक्ति न होगी।

मैंने इस उपन्यास को अच्छा ही समझ कर लिखा है और मेरा यह भी ख्याल है कि जो कुछ लिखा गया है अच्छा ही

लिखा गया है। इसलिये अधिकांश लेखकों की भाँति मैं समालोचकों के सम्मुख दीन भाव से नत मस्तक होकर खड़ा होने की आवश्यकता नहीं समझता। इसमें सन्देह नहीं कि जैसी मैं चाहता था इस उपन्यास की छपाई आदि नहीं हो सकी और छापे की भी बहुत सी भूलें मिलेंगी पर यह ज़िम्मेदारी मेरी नहीं है।

प्रयाग,
विजयादशमी
सं० १९८४ वि०।

—श्रीनाथसिंह।

प्रेम-परीक्षा

पहला परिच्छेद

एक गिलास पानी

"अब नहीं रहा जाता नन्दा!"

"चुनार दो स्टेशन और है बेटी! वहाँ पानी मिल जायगा।"

"और मैं चुनार पहुंचते पहुँचते प्यासों मर गई तो?"

"तो तेरे मुँह में पानी छोड़कर तुझे जिला लूँगी।"

उपरोक्त बातें एक अजान दुलहिन और एक अधेड़ स्त्री में मुगल सराय से इलाहाबाद जाने वाली सवारी गाड़ी के एक जनाने डिब्बे में हो रही हैं। उस डिब्बे में इन दो के सिवाय और कोई नहीं है। बैसाख मास का अन्तिम दिन है और समय क़रीब तीन बजे का होगा। गाड़ी गरम हो रही है। गरम गरम हवा खिड़कियों से आकर सारे डिब्बे में उत्पात

मचा रही है। बालों में गर्द समा रही है, आँखों में किरकिरी पीड़ा पहुंचा रही है और होंठ सूख रहे हैं। 'नन्दा मुँह में पानी छोड़कर जिला लेगी'। इस बात पर विश्वास करके वह अबोध बाला लेट रही और सूखते हुए कण्ठ से बोली—"अच्छा तो राम का नाम लेकर लेटती हूँ। पानी मिल जाय तो मुझे जिलाने की कोशिश करना।"

नन्दा चुपचाप बैठी उस बाला की ओर देखती रही। जब उसकी बिदाई होने लगी थी तो सारा घर रो उठा था। केवल नन्दा न रोई थी, क्योंकि वह उसके साथ थी। अब नन्दा से भी न रहा गया। उसकी आंखों में आँसू छलछला आए। अगर वह अपना कलेजा चीर कर उस बाला की प्यास बुझा सकती तो चीर देती। उसकी हृदय की वेदना और विवशता देखकर उस नई दुलहिन ने कहा—"अफसोस मत करो नन्दा। अगर भाग्य में यही लिखा होगा तो प्यासों मर जाऊंगी। पर नन्दा यह तो बताओ कि अम्मा, चाची, भौजी आदि जब सुनेंगी कि मैं प्यासों मर गई तो वे कितना रोवेंगी! बहुत रोवेंगी!! उनकी आँखें सूज जायँगी। उनसे कुछ मत कहना। अगर बहुत पूछें तो यही कह देना कि चन्दो बड़े मजे में चली गई।"

उस नई दुलहिन का नाम चन्द्रकला था पर लोग उसे प्यार से चन्दो ही कहकर पुकारते थे।

नन्दा का कण्ठ भर आया था, वह बोल नहीं सकती थी। खिड़की से बाहर गर्दन निकाल कर आंखें फाड़ फाड़ कर वह

दूर तक देखने लगी कि शायद कोई नदी, तालाब या कुंआ दिखाई पड़ जाय। उसे यह भूल गया कि वह रेल पर बैठी है। प्रकृति की गोद में पली हुई नन्दा एक पैदल यात्री की तरह जलाशय की तलाश करने लगी।

नन्दा यद्यपि नौकरानी थी पर वह चन्द्रकला के समीप एक माता के समान आदरणीय थी। बात यह थी कि अनाथिनी विधवा होने से और अपनी कोई सन्तान न होने से वह चन्द्रकला को बहुत प्यार करती थी। और जहाँ प्रेम की गम्भीरता होती है वहां किसी प्रकार का भेद भाव टिक नहीं सकता।

ज्यों त्यों करके चुनार स्टेशन आगया। जब पहियों की गड़गड़ाहट और इञ्जिन का भकभक शान्त हुआ तो हारमोनियम, तबला और सितार की ध्वनि सुनाई पड़ी। यह बाजा उस डिब्बे में बज रहा था जहाँ चन्द्रकला के पति, ससुर और उनके अन्य सम्बन्धी आदि बैठे थे। नन्दा की आँखें चढ़ते उतरते यात्रियों के बीच से दौड़कर पानी पाँड़े की तलाश कर रही थीं और उसका हृदय कह रहा था—"आफ़ ये लोग कैसे निर्दयी हैं। आप तो गुलछर्रे उड़ा रहे हैं और यह नहीं सोचते कि बहू कैसी है? भूखी कि प्यासी? कि क्या!"

जब गाड़ी ने सीटी दी और उसकी भकभक में इन बे मौके का सङ्गीत विलीन होगया तो नन्दा ने अपना सिर खिड़की के भीतर कर लिया और देखा कि गाड़ी में चार पाँच स्त्रियां

और आकर बैठ गई हैं तथा उनके बीच में ताँबे का एक घड़ा रखा है।

"कहाँ जाओगी बहिन ?" नन्दा ने पूछा।

"मिर्जापुर !" एक ने जवाब दिया।

"घड़े में क्या लिये हो ?" नन्दा बोली।

गङ्गाजल।" दूसरी ने जवाब दिया।

गङ्गाजल का नाम सुनते ही नन्दा अपनी गिलास लेकर उन स्त्रियों की तरफ लपकी और बोली—"वाह वाह बहिनो ! बड़े मौके पर काम आई हो। मानो तुम्हें भगवान ने खासकर हमारे ही लिये भेजा है। दे दो ! जल्दो से एक गिलास पानी दे दो ! मेरी चन्दो मर रही है।"

नन्दा की बातें सुनकर उन स्त्रियों का चेहरा तमतमा उठा और उन्होंने भौंहें टेढ़ी करके उसकी ओर देखा।

नन्दा ने कहा – "दे दो ! दे दो ! जल्दी करो।"

अब तो उन स्त्रियों से न रहा गया। वे आपस में कहने लगीं —"हाय जिसका इतना डर था वही हुआ ? गांव से बच-कर आए तो रेल में इस चुड़ैल ने टोक दिया।" एक ने नन्दा की तरफ मुँह करके कहा—"अरी मुँहजली जानती नहीं यह महाबीर जी की पूजा का पानी है। महाबीर जी को रोट चढ़ेगा। तेरे टोक देने से आधी पूजा का असर मिट गया। अब जो बाकी है वह भी मिटाना चाहती है क्या ?"

"महाबीर जी तो प्यासों नहीं मरेंगे पर मेरी चन्दो मर जायगी।"

वे सब स्त्रियाँ छेड़ी हुई सिंहनी के समान नन्दा की तरफ देखने लगीं। चन्द्रकला चुपचाप यह दृश्य देख रही थी। वह बोली—"नन्दा। मेरे पास आ ! मैं उनका पानी नहीं पिऊँगी।"

चन्द्रकला की बात खतम भी न होने पाई थी कि गाड़ी आकर मिर्जापूर स्टेशन पर खड़ी हो गई। सामने डोल में पानी लिए हुए आता एक आदमी दिखाई पड़ा। नन्दा ने गिलास खिड़की से बाहर बढ़ा दिया। डोल से गिलास में जल गिरने की आवाज़ सुनकर चन्द्रकला बैठ गई और नन्दा के हाथ से भरा गिलास लेकर गट गट पी गई।

पानी वाला नवबधू की इस सुन्दरता पर मुग्ध होकर खड़ा रह गया था और खाली गिलास को फिर से भरने जा रहा था कि पास आकर एक कुली चिल्ला उठा—"हाय ! हाय ! मुसलमान का पानी पी लिया। देखती नहीं हो यह मुसलमान है।"

देखते ही देखते वहां हजारों की भीड़ लग गई और हर एक आदमी चन्द्रकला की तरफ उँगली उठाकर कहने लगा—"उस औरत ने मुसलमान का पानी पी लिया ! मुसलमान हो गई !! अहा ! इतनी अच्छी औरत थ ।"

नन्दा के काटो तो खून नहीं। साहस करके उसने पानी वाले से पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है।"

"अब्दुल्ला।"

नन्दा पछाड़ खाकर डिब्बे में गिर पड़ी। चन्द्रकला को ऐसा मालूम हुआ मानों सर्वनाश उपस्थित हो गया। उन स्त्रियों ने डिब्बे से उतरते हुए कहा—"और मांगो हर एक से पानी! महाबीर स्वामी ने अच्छा श्राप दिया। चली थीं देवता का जल जूठा करने।"

दूसरा परिच्छेद

विषादमयी संध्या

जिस घटना को लेकर यह उपन्यास आरम्भ हुआ है वह हमारी मूर्खता, क्रूरता, कट्टरता और बेहूदगी की इतनी परिचायक है कि मैं उसका यहां ज़िक्र करके शर्म से गड़ा जाता हूँ। केवल मुसलमान का पानी पी लेने से एक हिन्दू रमणी मुसलमान समझ ली जायगी इस बात पर हमारे नव शिक्षित भाई भले ही विश्वास न करें पर इस नवीनता के युग में भी हमारे धर्म के ठेकेदार केवल इसी अपराध पर न जाने कितनी भोली आत्माओं को प्यारा हिन्दू धर्म छोड़ने के लिए विवश कर देते हैं। इतना बड़ा महान हिन्दू धर्म केवल खान पान और छुआछूत में इस तरह समा गया है कि कोई भी व्यक्ति वह कितना ही चरित्रवान क्यों न हो भूल से भी किसी विधर्मी का छुआ खा पी लेने से जाति-बहिष्कृत कर दिया जाता है? तो क्या चन्द्रकला की भी यही दशा होगी? उसके चन्द्रमुख पर सुहाग की जो छटा है क्या वह सदा के लिए लोप करदी जायगी? क्या

इसके भोले पनपर किसी को दया न आएगी ? जिसने उसकी रक्षा का भार लिया था क्या वह दुम दबा जायगा ? आह यह छोटी सी बात न होती तो अच्छा होता ! चन्द्रकला जीवन को बरबाद कर देने वाला यह पानी न पीती तो अच्छा होता । पर होनहार को कौन जानता है । राम मृग के पीछे गये और सीता की आफत आगई । दमयन्ती को नींद लगी कि नल उन्हें छोड़ कर चलते हुए । यदि ये बातें न होतीं तो सीता और दमयन्ती के स्त्री-तेज की परीक्षा कैसे होती ? तो क्या चन्द्रकला को भी कोई इसी प्रकार की विकट परीक्षा देनी होगी ? ईश्वर न करे । बेचारी अबला जीवन के प्रभात काल में ही यह भार सहन न कर सकेगी । आइए पाठक हम और आप मिलकर इस बात की कामना करें कि इस पानी पी लेने के कारण जिसमें उसका कोई कसूर नहीं है यदि उस पर विपत्तियाँ आएँ तो वह बहादुरी के साथ उनका सामना करे और उनपर विजय प्राप्त कर ले ।

गार्ड ने हरी झन्डी दिखाई इञ्जन ने सीटी दी । गाड़ी ने अपनी चाल शुरू की । पर अब इस गाड़ी में हमारे लिए कुछ नहीं है क्योंकि हमारी चन्द्रकला यहीं रही जाती है । कहाँ वह सोच रही थी कि जब वह गाड़ी से उतरेगी तो उसके लिए पालकी तयार रहेगी । मधुर गान और जगमग दीपमाला के साथ अनेकानेक अपरिचित स्त्रियाँ उसे पालकी में से उतारने आएँगी और कहाँ वह मुसाफिर खाने के गर्द से पटे एक कोने

में नन्दा के साथ अपने भाग्य का फैसला सुनने के लिये व्याकुल हो रही है ! आह नन्दा तूने चन्द्रकला को प्यासों क्यों न मर जाने दिया ?

मिर्जापूर का यह मुसाफिर खाना स्टेशन के बाहर घने पेड़ों की छाया में बना हुआ है । गाड़ी के आने जाने के समय इसमें कुछ भीड़ होजाती है पर अधिकतर यह खाली ही रहता है । आज बहुत दिनों के बाद यह मुसाफिर खाना आबाद हुआ है । पर जिस काम के लिये यह आबाद हुआ है वह इतना भयङ्कर है कि इसके आबाद होने पर किसी को प्रसन्नता नहीं हो सकती ।

चन्द्रकला और नन्दा के अलावा इस मुसाफिर खाना में दस व्यक्ति और हैं । ये लोग ईश्वर के दसों अवतारों की तरह दस प्रकार के चेहरे बनाकर चन्द्रकला के ऊपर कोई वज्र गिराने की बात सोच रहे हैं ।

इन दसों के मुखिया पण्डित कालीचरण करीब साठ वर्ष के लगभग होंगे । बाल सफेद हो गये हैं, दाँत सब गिर गये हैं, सुनाई कम पड़ता है, दिखाई कम पड़ता है, बिना लकड़ी के चल भी नहीं पाते पर बात करने में शायद ही इनका कोई मुकाबला कर सके । मुँह से तमाखू की पीक बहाते हुए आपने कहा—"रखने को तो बड़े २ पंडित भंगिन को भी रख लेते हैं । सरकारी राज है । कोई क्या कर सकता है पर

जो बात है वह सब के सामने है। अब इस बुढ़ाई उम्र में मैं अधर्म की सलाह नहीं दे सकता। माधोशरण क्या तुम्हारे लड़के का दूसरा ब्याह नहीं हो सकता ?"

माधोशरण चन्द्रकला के ससुर का नाम है। ये साधारण समझ के और सादे मिज़ाज के आदमी हैं। अपने आस पड़ोस के लोगों का जैसा रुख देखते हैं वैसा ही करने पर आमादा हो जाते हैं चाहे फायदा हो चाहे नुकसान। कालीचरण की बात का माधोशरण कुछ जवाब देने ही वाले थे कि उन दसों में से बीस वर्ष का एक युवक खड़ा होकर काँपती आवाज में बोला—"गुरु महाराज ! मैं अपना दूसरा ब्याह नहीं करूँगा।"

यह युवक चन्द्रकला का पति श्यामसुन्दर था। श्यामसुन्दर नवीन विचारों का उत्साही और होनहार बालक था। इस वर्ष इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा पास कर चुका था और आगे साल एम० ए० में पढ़ने का विचार कर रहा था। मुसलमान का पानी पीलेने से उसकी पत्नी मुसलमान होगई यह बात वह मानने के लिये तैयार न था। इसीलिये उसने पिता के बोलने के पहले ही अपने कुल गुरु कालीचरण को उपरोक्त जवाब दिया था।

नासमझ लड़के की ऐसी बात सुन कर कालीचरण आपे से बाहर होगये। उनका बिन दाँत का मुंह मशीनगन की तरह खुला और वे लगे बड़बड़ाने—"करो चाहे न करो। मुझसे क्या मतलब है पर यह बात जरूर है कि मुसलमानी को लेकर

तुम हमारी बिरादरी में नहीं रह सकते हो। तुमको और तुम्हारे बाप को भी बिरादरी से अलग होना पड़ेगा।"

"मुसलमान का पानी पी लेने से कोई मुसलमान नहीं होजाता।"

"फिर क्या करने से होता है ? अरे भाई ! मैं तो पहले ही कह रहा था कि माधोशरण लड़के को अँग्रेजी पढ़ाकर धर्म का नाश कर रहे हैं।"

माधोशरण आसमान की ओर देखने लगे और उनका लड़का श्यामसुन्दर अपने भविष्य जीवन की सङ्गिनी चन्द्रकला की ओर देखता हुआ मुसाफिर खाने से बाहर निकल गया। शेष सात आदमियों ने जिनमें से एक कहार और ६ उसी जाति के निरक्षर भट्टाचार्य्य थे सिर हिला कर कहा—"सत्य है गुरू महराज सत्य है !"

उन सातों को हां में हां मिलाते देखकर गुरू महाराज भी उठ खड़े हुए और दूने बल के साथ बोले—"अच्छा तो चलो हम लोग चलें। अब हमसे और इन पिता पुत्र से कोई वास्ता नहीं। अभी इसी से तो खातमा नहीं है। देखेंगे कि माधोशरण अपनी बेटियों का ब्याह कैसे और कहां करते हैं।"

बेटियों का नाम सुनकर माधोशरण चौंक पड़े और कालीचरण से लिपट कर बोले—"भैय्या ! जैसी सब की राय होगी वैसाही करूँगा।"

श्यामसुन्दर भीतर आकर बोला—"वैसा नहीं होगा।"

माधोशरणने दांत पीसते हुए जवाब दिया—"नहीं होगा तो जा! अपनी औरत को लिवाले और जहां चाहे रह! मेरे घर में तुर्कों को स्थान नहीं है।"

श्यामसुन्दर बोर्डिङ्गहाउस में रहता था वह भी गरमियों की छुट्टी में बन्द था। बेचारा संसार से अनभिज्ञ युवक सोच न सका कि पत्नी को लेकर कहाँ जायगा, क्या खायगा, उसे क्या खिलाएगा। अपनी असहाया पत्नी को लेकर वह मुसलमान हो सकता है। पर मुसलमान होने पर भी खाने पीने और रहने की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती है। उसको चारों तरफ अँधेरा दिखाई पड़ने लगा। वह अपनी पत्नी के पास जाकर बोला—"मैं तुम्हारा स्वामी होने लायक नहीं हूँ। विपत्ति काल में तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता। अगर मैं जानता होता कि मैं इतना लाचार और असमर्थ हूं तो तुम्हारे साथ विवाह करके तुम्हें ईश्वर के भरोसे इस सुनसान स्थान में छोड़ देने के लिए न लाता। पिता के अर्थबल का मुझे बड़ा भरोसा था। पर वह मुझसे कोसों दूर हैं। मैं इस बात की जी जान से कोशिश करूँगा कि कहीं अपने और तुम्हारे निर्वाह लायक काम तलाश लूं। पर जब तक यह नहीं होता तुम अपने पिता के घर पर जाकर रहो। मुझे किसी की परवाह नहीं है। तुम्हारा हाथ पकड़ा है तो तुमको इस संसार सागर में डूब मरने के लिए न कहूँगा। शीघ्रही मैं तुम्हें लिवाने आऊंगा। धीरज रखना। परमात्मा कुशल करेंगे।"

पति की बातें सुनकर गर्व से चन्द्रकला का हृदय फूल उठा। लज्जा से वह कुछ बोल नहीं सकी, दौड़कर पति का चरण पकड़ लेने की हिम्मत नहीं कर सकी। पर बिना पति की ओर देखे भी उससे नहीं रहा गया।

उस दिन की वह विषादमयी संध्या अपूर्व थी। दिन के साथ चन्द्रकला के सुखों का अन्त होरहा था और रात के साथ विपत्ति की भयानकता बढ़ती जा रही थी। संध्या के धुंधले प्रकाश में श्यामसुन्दर और चन्द्रकला की आंखें छिनभर को मिल गईं। आँखों का यह प्रथम ही सम्मिलन था। दोनों के प्राण आँखों में आकर अश्रुओं के रूप में झूल पड़े थे। हवा बन्द हो गई थी। मुसाफिर खाना निर्जीव सा मालूम पड़ रहा था। सामने फलों से लदा आम का पेड़ खड़ा था। वे अधपके आम ऐसे जान पड़ते थे मानों उस पेड़ की पत्तियों रूपी आंखों में लटके हुए आंसू हों। कदाचित केवल वह आम वृक्ष ही चराचर जगत में ऐसा प्राणी था जो इस नवीन दम्पति की वेदना को अनुभव कर रहा था।

जब अन्धकार ने दोनों की आंखों पर परदा डाल दिया तो श्यामसुन्दर चुपचाप एक तरफ को बादल की छाया के समान खिसक गया। किसी को पता न चला कि वह कब और किधर चला गया।

अब मुगलसराय की तरफ जानेवाली गाड़ी का समय हो रहा था। धीरे धीरे मुसाफिर खाने में आदमियों की संख्या बढ़ रही थी। कालीचरण ने कहा—"माधोशरण अच्छा है हम लोग अपराध क्यों लें। अपनी इस पतोहू को रामनगर वापस भेज दो। इसके माँ बाप के जी में जो आएगा करेंगे। हम लोगों से क्या मतलब?"

अन्त में सब लोगों की राय से यह निश्चय हुआ कि माधो-शरण विन्ध्याचल देवी का दर्शन करते हुए सब को लेकर सिरसा चले जायँ और इस बात का पता लगाएँ कि श्याम सुन्दर कहाँ गया तथा कालीचरण जिस रास्ते से आए थे उसी से होकर चन्द्रकला को उसके पिता के घर रामनगर पहुंचा आएं।

इस तमाम बात चीत के बीच में अब्दुल्ला अपने एक साथी को लेकर इधर उधर टहल रहा था कि ये लोग इस नवीना दुलहिन को छोड़ दें तो वह उसे ले जाकर अपना घर बसावे। अब्दुल्ला जब नमाज़ पढ़ने जाता था तो यही जपता था कि या खुदा मुझे एक दुलहिन दे। उसने समझा कि खुदा ने उसकी बिनती सुनली है और घर बैठे उसे एक दुलहिन भेज दी है। उसके आनन्द का ठिकाना नहीं था। पर जब पंडित मंडली में इस प्रकार का निश्चय हुआ तो उसकी आशा पर पानी फिर गया। उसका चेहरा बुझे हुए भाड़ की तरह शान्त हो गया और वह अपने साथी से कहने लगा—"यार

इतने पर भी मेरे दिन नहीं लौटे तो अब शायद कभी न लौटेंगे। दुलहिन क्या है सोने की चिड़िया है। पिंजड़े में आकर निकल गई।"

उसका साथी बोला—"सब्र करो अब्दुल्ला! तुम्हारे दिन लौटेंगे। मैं पंडितों की आदतों से खूब वाकिफ़ हूँ। देख लेना आज नहीं तो दस दिन बाद इस औरत को ये लोग तुम्हारे घर पहुंचा जायँगे।"

अब्दुल्ला अकड़ कर इधर उधर घूमने लगा और गुन-गुनाने लगा—

देखा जो हुस्न यार का तबीयत मचल गई।
आँखों का था कसूर छुरी दिल पै चल गई॥

तीसरा परिच्छेद

बाप के दरवाजे पर

सरयूपारीण ब्राह्मणों में सिरसा के मिश्र और रामनगर के तिवारी एक खास स्थान रखते हैं। ये दोनों घराने जितने कुलीन और ऊँचे हैं धन धान्य से भी उतने ही सम्पन्न हैं। इन स्थानों में बने हुए सती चबूतरों से यह बात स्पष्ट है कि इन कुटुम्बों में जितनी विधवाएं आग में जल कर सती हुई हैं उतनी शायद और किसी कुटुम्ब में नहीं हुई। अगर सती प्रथा प्रचलित होती तो आज दिन भी विधवाओं को आग में जला देने में ये कुटुम्ब जरा भी न हिचकते। इन घरों की कई एक विधवाएं काशी और प्रयाग में वेश्यावृत्ति करके अपना जीवन निर्वाह कर रही हैं। पर इसमें ये कुटुम्ब अपनी बदनामी नहीं समझते क्योंकि ज़रा सी भी त्रुटि देखने पर ये विधवाओं को घरों से निकाल देते हैं और इस प्रकार अपनी कुलीनता की रक्षा करते रहते हैं। इन कुटुम्बों में विवाह संबंध भी बहुत दिनों से चला आता है। उसी के अनुसार सिरसा के प्रमुख पंडित माधोशरण मिश्र के पुत्र श्यामसुन्दर का राम-नगर के प्रमुख तिवारी दौलतराम की पुत्री चन्द्रकला से

विवाह हुआ था। यह विवाह जब हुआ था तो श्यामसुन्दर की आयु केवल ९ वर्ष और चन्द्रकला की ७ वर्ष की थी। उसके ठीक ११ वर्ष बाद गौना हुआ। इतने दिन बाद गौना इसलिए हुआ कि श्यामसुन्दर ने प्रण कर लिया था कि बिना बी० ए० पास किए गौना न करूँगा। इसीलिये चन्द्रकला १८ वर्ष की आयु तक नैहर में रह गई, पर १८ वर्ष की चन्द्रकला संसार से इतनी अनभिज्ञ थी कि उसमें और एक सात वर्ष की बच्ची में आयु के सिवाय कोई और फरक न था। ब्याह के बाद वह दूसरे की सम्पत्ति समझ ली गई थी इसलिये उसे कुछ पढ़ाया लिखाया भी न गया था। लेकिन नैहर में स्वच्छन्द खेल कूद में समय बिताने के कारण चन्द्रकला शरीर से बड़ी तन्दुरुस्त और सुडौल हो गई थी। उभर यौवन ने उसकी कान्ति को और भी जगमगा दिया था। प्रकृति की सारी सुन्दरता उसमें घनीभूत होकर फूटी पड़ रही थी। कहते हैं एक बार राजा साहब के एक उच्च कर्मचारी ने गङ्गा से स्नान करके वापस आते समय उससे कुछ छेड़ छाड़ की थी पर चन्द्रकला ने उनके मुँह पर ऐसा चपत लगाया था कि मारे शर्म के वे बहुत दिनों तक घर से न निकले थे। इसके सिवाय चन्द्रकला के सम्बन्ध में और कोई बात नहीं सुनी गई थी। हर एक के मुँह से यही निकलता था कि चन्द्रकला जैसी सुन्दर है वैसी ही चरित्रवान भी है।

ऐसी सुयोग्य लड़की का कोई अनादर करेगा यह बात

किसी के दिल में कभी पैदा ही न हुई थी। पर जब दस बजते बजते कालीचरण नन्दा और चन्द्रकला के साथ तिवारी जी के द्वार पर आ उपस्थित हुए तो सम्पूर्ण रामनगर में सनसनी सी फैल गई। किसी ने कुछ कहा किसी ने कुछ। एक वयो वृद्ध सज्जन ने अपनी स्त्री से कहा—"मैं तो पहले ही से जानता था कि इस लड़की के रङ्ग ढङ्ग अच्छे नहीं हैं। पाप कहीं छिपता है।"

इस बात पर कि चन्द्रकला ने मुसलमान का छुआ पानी पी लिया है किसी को विश्वास न हुआ। हर एक ने यही अनुमान किया कि हो न हो कुछ दाल में काला है। जो पिता चन्द्रकला की विदाई के समय फूट फूट कर रो रहा था उसने अपनी प्यारी बेटी को घर में वापस लेने से इनकार कर दिया। गाँव की वयो वृद्ध महिलाओं ने चन्द्रकला को एक घुड़साल में लेजाकर उसके पेट आदि की परीक्षा की और इस बात की घोषणा कर दी कि चन्द्रकला को तीन महीने का गर्भ है। झूठ मूठ यह अपराध लगा देख चन्द्रकला ने यह समझ लिया कि उस पर विधाता बाम हो गये हैं। कहाँ वह सोच रही थी कि माँ बाप के पास पहुंच कर वह खूब रोयेगी, कहां उसके आंसू ही सूख गये। ग्लानि, लज्जा और क्रोध से उसका चेहरा रक्त मय होगया। उसकी आंखों से चिनगारियां निकलने लगीं।

तिवारी जी के दरवाजे पर एक कुआं था। इस अपमान से बचने का एक मात्र साधन उसी कुएं को जानकर चन्द्रकला

एकाएक दौड़कर उसमें कूद पड़ी। पर एक तो वह कुआं कम गहरा था दूसरे उसको बचाने का इतनी शीघ्र प्रयत्न किया गया कि उसका यह उपाय व्यर्थ गया। हजारों आंखों की टकटकी के बीच में वह कुएं से एक निर्जीव प्रतिमा के समान बाहर निकाली गई। उसके बाप ने कहा—"बेटी! इस प्रकार प्राण देकर मुझे बँधाओ मत! तुमको पैदा किया, पाला पोसा, धूम धाम से तुम्हारा ब्याह किया, गौना किया! अब मैं तुम्हारे ऋण से मुक्त हो गया। अब मेरा गला मत घोंटो! अपने पापों का भार मेरे सिर पर मत लादो। अपने घर जाओ! तुम्हारे सास ससुर जैसा कहें करो। मरने कहें मरो, जीने कहें जिओ। मैं अब तुम्हारा कोई नहीं! समझती हो?"

"सब समझती हूँ" कह कर चन्द्रकला निराशा भरे नेत्र से पिता की ओर देखने लगी। पर दौलतराम के दिल में मानो दया नहीं थी। उनके हृदय का स्नेह मानों जमकर पत्थर हो गया था। वे राक्षस के समान बिकराल वेष धारण करके बातें कर रहे थे।

नन्दा ने कहा—"मुझ अभागिनी की छाया पड़ने से तुम्हारी बेटी के भी भाग्य फूट गये।"

"भाग्य फूट गये तो क्या मैं जोड़ दूंगा जो मेरे पास उसे लेकर आई हो। यहाँ आकर कुएं में कूदने से अच्छा तो यह था कि वहीं कोई कुआं देखकर उसमें कूद पड़ती।"

नन्दा ने गिड़गिड़ा कर फिर कहा—"तो अब क्या करना चाहिये? तुम ठहरने को एक कोठरी दे दो तो मैं मज़दूरी करके अपना और उसका पेट भर लूंगी।"

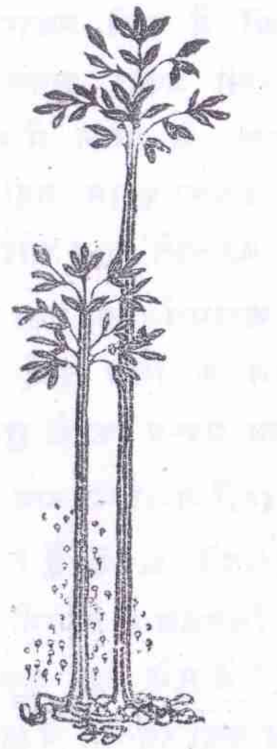
"मुझे जो देना था दे चुका, जो करना था कर चुका। अब मैं इस लड़की का मुंह तक देखना पाप समझता हूं।"

नन्दा चुप हो रही। चन्द्रकला की माँ से कुछ बिनती करने के लिये वह मकान के अन्दर जाने लगी पर मकान चारों तरफ से बन्द कर दिया गया था। भीतर चन्द्रकला की माता दहाड़ मार मार कर रो रही थी, अपनी पुत्री को केवल एक बार देखने की पुकार मचा रही थी और कह रही थी—

"जिस देश में बाप के दरवाज़े पर, बाप के सामने बेटी का इस प्रकार अपमान होता है उस देश में भूडोल क्यों नहीं आ जाता? उस देशमें आसमान क्यों नहीं फट पड़ता? वह देश पृथ्वी के गर्भ में क्यों नहीं समा जाता? हाय! हाय! ईश्वर तुम कहां हो? तुम्हारी आँखें फूट गई हैं क्या?"

दौलतराम कालीचरण को एक एकान्त स्थान में ले गये और उनके हाथ में पाँच गिन्नियाँ रख कर बोले—"महाराज! अब यह आपकी वस्तु है। आप इसको चाहे रखें चाहे निकाल दें। मेरा इस पर कोई अधिकार नहीं। इसको हमारे यहां से लेजायें और इसके सास ससुर जैसा कहें वैसा करें। इसे अपने घर में ठहरा लूँगा तो संसार मुझे क्या कहेगा।"

कालीचरण गिन्नियों का लोभ संवरण नहीं कर सके। उन्हें जेब में रखते हुए उन्होंने ऐसा मुंह बनाया मानों वे दौलतराम का पूर्ण अभिप्राय समझ गए हैं और उसके अनुसार आचरण करके इस उपहार का बदला चुकाने में एक भी न लगा रक्खेंगे।



चौथा परिच्छेद

——— :o: ———

विपत्ति का आरम्भ

वही मुसाफिर खाना है। वही विषादमयी सन्ध्या है। दिशाओं में उसी प्रकार सन्नाटे का साम्राज्य है। आम का वृक्ष उसी प्रकार अपने फल रूपी आँसू लटकाये खड़ा है। चन्द्रकला के बगल में नन्दा मौजूद है पर उसके आँखों के सामने उसका श्याम नहीं है। धीरे धीरे चन्द्रकला को श्यामसुन्दर की बातें याद आईं।

"मुझे अपनी असमर्थता का पता नहीं था नहीं तो इस निर्जन स्थान में छोड़ने के लिये तुम्हें न लाता। धीरज रखना, शीघ्र जीविका का प्रबन्ध करके तुम्हें बुला लूँगा।"

"चन्द्रकला इन्हीं शब्दों को बार बार दुहराने लगी।

आह! वे कितने अच्छे हैं? उनकी बोली में कितना जादू है? उनकी चितवन में कितनी आशा है? उनके चेहरे पर कितना तेज है? वे मुझे कहाँ बुलाने जायँगे? आज मैं यहाँ हूँ कल न मालूम कहाँ रहूँगी? वे मुझे कहाँ पायेंगे? मेरा पता उन्हें कौन देगा? इसी प्रकार के बिचारों में चन्द्रकला तल्लीन हो रही थी। उसके मुंह पर से घूंघट हट गया था। सामने

कालीचरण खड़े थे। पर चन्द्रकला ने मानों मुंह मूंदने की जरूरत नहीं समझी। मानों उसकी समझ में यह बात आगई थी कि जब स्त्री को अपनी रक्षा करने के लिए स्वयं तयार होना पड़ता है तो घूंघट आप से आप हट जाता है। घूंघट की शोभा तभी तक है जब तक लज्जा की रक्षा करने वाले आत्मीय जन पास मौजूद हों। जब ऐसा कोई नहीं है तो जड़ घूंघट क्या कर सकता है।

अब्दुल्ला का आज दिन लौटा था। सिर खोले, लुङ्गी लगाए, एक फटी सी कमीज पहने, बाँहें सकेले वह पंडित कालीचरण से घुलघुल कर बातें कर रहा था और कनखियों से चन्द्रकला की तरफ देखता जाता था। उसका यह बर्ताव देखकर चन्द्र-कला की आंखे जली जा रही थीं पर वह उसका कर क्या सकती थी? वह अबला थी, असहाया थी।

कालीचरण ने नन्दा को बुलाकर कहा—"अब मैं जाता हूँ। बहू ने जिसका पानी पिया है वे खड़े हैं। अच्छा होगा कि इन्हीं के साथ चली जाय।'

चन्द्रकला ने देखा यह लजाने का मौका नहीं है। उसने दृढ़ता से जवाब दिया—मैं किसी के साथ नहीं जाऊंगी मैं तुम्हारे साथ अपने ससुर के घर चलूंगी।

कालीचरण—"ऐसा नहीं हो सकता?"

चन्द्रकला—"क्यों नहीं हो सकता?"

कालीचरण—जब मैं तुम्हें लेकर तुम्हारे पिता के यहाँ चला था तो तुम्हारे ससुर ने कह दिया था कि यदि वे अपने यहाँ न रक्खें तो लाकर इसी मुसाफिर खाने में छोड़ देना।

चन्द्रकला—पर मेरे पति ने तो रखने से इनकार नहीं किया। मुझे उनके पास पहुँचा दो।

कालीचरण—मेरा यह काम नहीं है। तुम्हारी जहाँ खुशी हो जाओ।

कालीचरण से इस प्रकार तिरस्कृत होकर चन्द्रकला ने नन्दा से कहा—नन्दा अब मैं क्या करूं? कहीं एक गिलास जहर नमिलेगा?

नन्दा सुनती सब कुछ थी पर मानों जवाब देना भूल गई थी। अश्रुपूर्ण नेत्रों से उसने चन्द्रकला की ओर देखा और बड़ी जोर से अपना सिर पीट कर कहा—बेटी यह मेरे पाप का फल है।

"तुम्हारे पाप का नहीं मेरे पुन्य का फल है।" अब्दुल्ला ने जरा पास आकर कहा।

अब्दुल्ला को इस प्रकार बातें आरम्भ करते देख कर पंडित कालीचरण ने अपना रास्ता लिया। अब सिवाय ईश्वर के अदृश्य हाथों के उन अबलाओं का रक्षक वहाँ पर कोई नहीं था।

"चलो मेरे घर चलो!" अब्दुल्ला ने फिर मुस्कराते हुए कहा।

"धोखे में एक गिलास पानी पिला कर जिसने मेरे सारे सुखों को मटिया मेट कर दिया, उसके घर चलूँ? यह कदापि नहीं होगा!" चन्द्रकला ने दृढ़ता के साथ कहा।

अब्दुल्ला बोला—मेरे यहां न चलोगी तो कहाँ जाओगी? अब तुम्हारा मेरे सिवा और कौन है?

चन्द्रकला—मेरा ईश्वर है! मेरा धर्म है! मेरा प्राण है। मेरा शरीर है! मेरा मन है! अभी मुझे किस बात की कमी है, मूर्ख!

एक अपढ़ और अनुभव शून्य लड़की के मुँह से इस प्रकार की बातें सुनकर नन्दा कुछ चकित हुई। वह यह न सोच सकी थी कि अब्दुल्ला की बातों का क्या जवाब देना चाहिए। अब नन्दा के दिल में भी कुछ दृढ़ता आई। उसने कहा जा अपना रास्ता देख! पराई औरतों से छेड़छाड़ करने का तुझे क्या हक है?

अब्दुल्ला—पराई औरत क्यों है? मेरी है। मुझे मिली है।

अब्दुल्ला की बातों को सुनी अनसुनी करके चन्द्रकला ने कहा—नन्दा इस सुनसान जगह से उठ कर कहीं ऐसे स्थान में चलो जहाँ कुछ आदमी हों।

चन्द्रकला की बुद्धिभरी और समयानुकूल बात सुन कर नन्दा उठ खड़ी हुई और शहर की तरफ चलने लगी। अब्दुल्ला स्टेशन की तरफ गया।

रास्ते में नन्दा ने कहा - अब उस छिछोरे मुसलमान का डर नहीं है। वह अपना सा मुंह लेकर चला गया? अब एक काम करना चाहिए।

चन्द्रकला ने कहा—कहो! कहो! क्या?"

नन्दा—मैं विन्धाचल कई बार गई हूँ, पर मुझे रास्ता मालूम नहीं है। गङ्गा के किनारे किनारे या रेल की पटरी पटरी चलो तो दो तीन घंटे में हम विन्धाचल पहुंच जायंगे। वहां मेरी जान पहचान की एक पंडाइन है। वह बेचारी बड़ी भल मानस है। वह इस विपत्ति में हमारी सहायता जरूर करेगी। उसके यहाँ मेहनत मजदूरी करके हम लोग अपना पेट पाल लेंगी।

चन्द्रकला की समझ में यह बात आगई। और यह तय हुआ कि गङ्गा के किनारे किनारे विन्ध्याचल चला जाय।

पाचवां परिच्छेद

गङ्गा की गोद में

दो घड़ी रात जा चुकी है। चतुर बाजीगर की तरह चन्द्रमा रात के अँधेरे में जल थल पर अपनी करामात दिखाकर खुश हो रहा है। पीपल की पत्तियां उज्वल कांच के टुकड़ों के समान चमक चमक कर तारों की छवि क्षीण करने का प्रयत्न कर रही हैं। चतुर चोर की तरह चमगीदड़ इधर से उधर निकल जाते हैं। चारों तरफ शान्ति छाई है। चाँदी की विहार भूमि की तरह गङ्गा की धारा शान्त और शून्य बह रही है। चाँदनी रात और दरिया का किनारा दोनों ने मिल कर जिस सौन्दर्य की सृष्टि की है वह देखते ही बनता है। पर चन्द्रकला को और नन्दा को यह सब देखने की फुरसत नहीं है। गङ्गा माता को बारम्बार नमस्कार करती हुई और विन्ध्याचल सकुशल पहुँच जाने की कामना करती हुई दोनों जल्दी जल्दी बढ़ी जा रही हैं। दोनों के हृदयों में घोर अन्धकार छाया है। पैर आगे बढ़ते जाते हैं पर आंखों से कुछ दिखाई नहीं देता। पीछे से अब्दुल्ला अपने चार पांच सहायकों के साथ दबे पाँवों बढ़ा आ रहा है। इसका न चन्द्रकला

को कुछ पता है न नन्दा को। उन्होंने तो यही समझ रखा था कि अब्दुल्ला निराश होकर स्टेशन पर चला गया है। उन्हें क्या खबर थी कि वह छल से उनपर धावा करेगा। इस बात का ज्ञान होता तो वे रात कहीं मिर्जापूर में ही बितातीं।

जब अबदुल्ला और उसके साथी बहुत करीब आगये तो उनकी परछाईं चन्द्रकला ने अपने पैरों के पास देखी। वह कुछ भयभीत हुई और दौड़कर नन्दा से लिपट गई। नन्दा ने चौंक कर पीछे की ओर देखा तो उसकी भी जान सूख गई। वह बड़े ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगी—"मरी! मरी! हाय! हाय! चोर डाकू! दौड़ो! बचाओ! भगवान!"

अब्दुल्ला के एक साथी ने आगे बढ़कर नन्दा का मुंह दबा लिया, उसके दोनों हाथ पकड़ कर उसे जमीन में गिरा दिया और धीरे से उसके कान में कहा—बस चुप रह ज्यादा शोर गुल मचाएगी तो गङ्गा में डुबो दूँगा।

नन्दा भय से काँप उठी और टकटकी बाँध कर उसकी ओर देखने लगी। चन्द्रकला इस समय नन्दा को खूब कस कर पकड़े हुए थी और उसके गिरते ही वह भी गिर गई थी। उसके कोमल हाथों को बलपूर्वक अपनी ओर खींच कर अब्दुल्ला ने कहा—बोलो, अब क्या कर सकती हो?

चन्द्रकला ने निर्भीक और स्वस्थ चित्त से कहा—अगर मेरे स्थान पर तुम होते और तुमको कोई इसी प्रकार पकड़ लेता तो तुम क्या करते?

अब्दुल्ला—मैं उस पकड़ने वाले के गले में अपनी बाहें डाल देता।

चन्द्रकला—चाहे वह काला नाग ही क्यों न होता?

अब्दुल्ला—चाहे जो होता।

चन्द्रकला—विश्वास नहीं होता।

अब्दुल्ला—अच्छा लो पकड़ कर देख लो। तुम्हारे गले में बाहें डाल देता हूँ या नहीं।

चन्द्रकला—और तुम्हारी बहन को कोई इसी प्रकार पकड़ लेता तो?

अब्दुल्ला—बहिन के जो जी में आता करती।

चन्द्रकला—और बहिन तुम्हें पुकारती तो तुम उसकी मदद को दौड़ते या नहीं?

अब्दुल्ला—क्यों नहीं।

चन्द्रकला—मैं भी तो तुम्हारी बहन ही हूँ।

अब्दुल्ला—बहन कैसे हो? तुम मेरी बीबी हो।

चन्द्रकला—अपना धर्म और ईमान मत बिगाड़ो।

अब्दुल्ला—मैं धर्म और ईमान कुछ नहीं जानता। मुझे बीबी चाहिए और कुछ नहीं। बीबी ही से धर्म और ईमान सब है। बिना बीबी के कुछ नहीं।

चन्द्रकला—क्या जबरदस्ती कोई किसी को अपनी बीबी बना सका है?

अब्दुल्ला—मैं तो बनाऊंगा।

चन्द्रकला—वह आसमान में चन्द्रमा चमक रहा है उसे तुम पा सकते हो ?

अब्दुल्ला सिटपिटा गया। इस बात का जवाब देने के लिये वह चारों तरफ अपने ख़याल दौड़ाने लगा। इतने में उसके दूसरे साथी ने आगे बढ़कर चन्द्रकला को बलपूर्वक चूम लिया और कहा—वह आसमान का चाँद है। ज़मीन की चन्द्रमा तुम हो। जो तुमको पागया वह मानों उसको भी पागया।

अपने साथी का यह व्यवहार अब्दुल्ला से सहा नहीं गया। उसने कहा—खबरदार रहीम ! मेरी बीबी को इस तरह बेइज्ज़त करने का तुमको कोई हक नहीं है।

रहीम ने जवाब दिया—यह साझे का माल है। हमारा भी है। तुम्हारा भी है। मैं भी चूमूं तुम भी चूमो।

अब्दुल्ला—साझे का माल कैसे है ?

रहीम—है कैसे नहीं।

इस तरह बातों के बढ़ जाने से और एक नवयौवना स्त्री के सामने अपनी अपनी बहादुरी दिखाने के खयाल से भी अब्दुल्ला और रहीम आपस में गुत्थम गुत्था करने लगे, तथा उनके शेष साथी बीच बिचाव करने लगे।

जब दो शिकारी आपस में लड़ जाते हैं तो शिकार को प्रायः अपनी रक्षा करने का मौका मिल जाता है। चन्द्रकला को भी कुछ इसी प्रकार की स्वतंत्रता का अनुभव हुआ। उसने

चारों तरफ देखा। गङ्गातट से दूर खड़े सघन वृक्षों को देखा, तारों को देखा, आसमान को देखा, चन्द्रमा को देखा, और चुपचाप सोती हुई गङ्गा को देखा। उसकी समझ में आगया कि उसको क्या करना चाहिए। जो हृदय निराशा से बालू के समान सुप्त पड़ा था उसमें आशा की किरणें लग गईं। उसकी आँखें चमक उठीं। उसने बैठे ही बैठे कहा—"नन्दा, जाती हूं। इस विपत्ति में तुम्हारा अञ्चल नहीं छोड़ना चाहती थी पर जान पड़ता है कि बिना तुमको छोड़े मेरा उद्धार न होगा। जिस हृदय से इतना अपमान, इतना वियोग, इतना कष्ट सहा है उसी से तुम्हारा वियोग भी सहूँगी। तुम रामनगर चली जाना ? मैं दूसरे लोक को जाती हूँ। वहाँ ब्रह्मा से अपना कागज विचरवाऊंगी। देखूंगी कि मैंने वास्तव में ऐसे ऐसे फल भोगने लायक पाप किये थे या यह सब विधाता की भूल है। अच्छा जाती हूँ प्रणाम ! देर करने का मौका नहीं है।

नन्दा की बुद्धि जड़ हो गई थी। चन्द्रकला की बातों का सब कुछ अर्थ न लगा सकी। उसने कहा—"इस निर्जन रात्री में इन राक्षसों की आखों के सामने कहाँ जाओगी ? कहाँ जा सकती हो ? आज चाँदनी रात न होती तो हमें कौन देख सकता था ? पर चन्द्रमा कलङ्की है। वह चाहता है संसार कलङ्की हो जाय। इसीलिये वह कुलटा की टिकुली के समान चमक रहा है। कहाँ जाओगी ? वह तुम्हें कहीं जाने न देगा !"

"मातेश्वरी गङ्गा की गोद में जहाँ मेरा कोई कुछ नहीं कर सकता।" कहती हुई चन्द्रकला जाल से निकली हुई मछली के समान अपने स्थान से उछल कर एकाएक गङ्गा में जा गिरी और तीर के समान तैर कर बात की बात में बीच धार में जा पहुँची।

"हाय ! हाय !! मरी ! मरी !!" कह कर नन्दा उठ खड़ी हुई और आँखें फाड़ २ कर उस स्थान की तरफ देखने लगी जहाँ पानी में छप छप का शब्द हो रहा था।

इस घटना ने अब्दुल्ला और रहीम का मल्लयुद्ध बन्द कर दिया। जिसको ये अपना रणकौशल दिखा रहे थे जब वही नहीं रही तो लड़ कर क्या होगा। अब्दुल्ला ने कहा—"या खुदा अगर मैं तैरना जानता होता ?" रहीम ने कहा—"तैरना तो मैं जानता हूँ पर इस अनजाने स्थान में एक मिट्टी की पुतली के लिये जान नहीं दे सकता।"

गङ्गा के किनारे पैदा होने के कारण, नित्य प्रति गङ्गा में स्नान करने के कारण, गङ्गा के जल में खेल खेल कर बड़ी होने के कारण चन्द्रकला पानी से ढीठ होगई थी। उसे कुछ कुछ तैरना जरुर आता था पर इतनी दूर तैर कर वह कभी न गई थी। जब अपना प्राण और धर्म संकट में आ जाता है तो मनुष्य में चौगुना बल और साहस आ जाता है। इसलिये ऐसे विकट समय में यदि चन्द्रकला तैर कर उतनी दूर चली गई तो

पाठकों को आश्चर्य न करना चाहिए। चन्द्रकला को स्वयं अपने इस अपूर्व बाहुबल और साहस पर आश्चर्य हुआ। उसे ऐसा जान पड़ा मानों ईश्वर स्वयं उसके शरीर में यह शक्ति सञ्चार कर रहे हैं।

धीरे धीरे चन्द्रकला पानी के बहाव के साथ पूर्व दिशा की ओर बढ़ने लगी। अब्दुल्ला रहीम आदि सब किनारे किनारे उसी तरफ पानी के छप छप पर नज़र गड़ा कर चलने लगे। नन्दा भी उनके साथ साथ उसी तरफ को बढ़ रही थी। जब ये लोग मिर्ज़ापूर के घाट के पास पहुंचे तो वहाँ पहरे वाले सिपाहियों से इनकी छेड़ छाड़ शुरू होगई। "कौन हो ? कहाँ से आते हो ? कहाँ जाओगे ? यहाँ क्या मतलब है ? साथ में यह औरत कौन है ?" आदि किसी भी प्रश्न का ठीक ठीक उत्तर ये लोग न दे सके। इधर नन्दा ने पूछने पर कहा—"मेरे मुंह में ये लोग कपड़ा ठूंस रहे थे। मेरी चन्द्रो गङ्गा में कूद पड़ी।" बस पहरे वालों ने सीटी बजाई। कुछ सिपाही और आगये और अब्दुल्ला आदि को गिरफ्तार करके थाने की ओर ले चले।

अब चन्द्रकला के मार्ग में कोई खतरा नहीं रहा। अब वह किनारे आ सकती है और जहाँ चाहे जा सकती है। पर वह कहाँ जायगी ? उसे रास्ता कौन बताएगा ? विपत्ति में देवदूत के समान एक नन्दा मिली थी। लेकिन उसे भी तो पहरे वाले पकड़ ले गये। चन्द्रकला गङ्गा की धारा के साथ बहती जाती थी और यही सब सोचती जाती थी। उसके हाथ

पाँव थक गये थे, उसके सिर में दर्द होने लगा था, उसकी साँस फूल उठी थी, उसे इस प्रकार तैरने का और मेहनत करने का अभ्यास न था। लेकिन उसमें यह भी साहस न था कि वह किनारे लग कर थोड़ा सुस्ता ले। उसने सोचा—किनारे जाकर क्या होगा? बीच धार में ठीक है। तैरते तैरते मैं मर जाऊँ, गङ्गा की बालू में मेरी मिट्टी मिल जाय, यही सबसे अच्छा है! क्योंकि यदि वे कभी गङ्गा नहायँगे तो मेरी आत्मा मेरी मिट्टी उनको स्पर्श करके तर जायगी। इसीमें कल्याण है। इसी में दोनों कुलों की नाक रहेगी। यही इस समय मेरा कर्त्तव्य है। लेकिन दूसरे ही क्षण चन्द्रकला ने सोचा—उन्होंने कहा है धीरज रखना, तुमको बुला लूंगा, इस समय मैं असमर्थ हूं। वे मुझे कहां बुलाने आएंगे, मुझे कहां खोजेंगे, मुझे कहाँ पाएंगे? नहीं, मरुंगी नहीं। भिखारिनी हो जाऊंगी! दूर दूर घूमूंगी! उनका पता लगाऊंगी! आह उनकी कैसी सुन्दर सूरत है। लाख विपत्ति उठाने के बाद उनको एक बार भी देख लूंगी तो जन्म सफल हो जायगा। मैं क्यों मरुं। मैं सधवा हूँ। मेरे स्वामी मौजूद हैं। एक न एक रोज मैं उनकी होकर संसार में जीवन का सुख लूटूंगी। वे मेरा पता लगावेंगे मैं उनका पता लगाऊंगी। बस कहीं न कहीं भेंट हो ही जायगी।

इस प्रकार गङ्गा में और अपने विचारों में, बहती हुई चन्द्रकला को यह पता न चला कि चन्द्रदेवता पूर्व से पच्छिमी को

पास आगए। गंगा की दोनों ओर से टन टन करके घड़ियों ने जब पांच बजाया तो उसने देखा कि सामने महाराज बनारस की दूध के समान उज्वल कोठी चुपचाप खड़ी गंगा के जल में अपनी छाया डाल रही है। अब वह अपने परिचित प्रदेश में आगई थी। यह रामनगर था। कोठी से ज़रा पूरब की ओर हट कर वह घाट चुपचाप सोया था जहाँ वह नित्य नहाने आती थी। घाट से पूरब की ओर राजा साहब की मोर पंखी और हंसपंखी आदि नावें साफ साफ दिखला रही थीं। उसके जी में आया कि यहां किनारे लगकर एक बार फिर मां बाप के पास चलना चाहिए। और उनसे अपनी विपत्ति की कथा कहनी चाहिए शायद उन्हें कुछ दया आजाय। फिर उसने दूसरे ही क्षण सोचा कि उसे तो यहां मुसलमान का पानी पीने के अतिरिक्त भी एक और भीषण अपराध लग चुका है। वहाँ वह क्या मुँह लेकर जायगी। यहां जानेसे तो गङ्गा में डूब मरना ही अच्छा है। यह खयाल आते ही उसका शरीर भारी हो गया, उसकी आँखें बन्द हो गईं, उसका हृदय चूर चूर हो गया, उसके विचार हवा होगये और उसने अपने हाथ पांव ढीले कर दिये।

छठा परिच्छेद

—○:०:○—

रङ्ग में भङ्ग

माधोशरण का घर बहुत बड़ा है। उसमें दो खंड है भीतर का खंड केवल स्त्रियों के लिये है। बाहर खंड में गल्ला, घी, रुपया पैसा आदि रहता है तथा घोड़े बहली के बैल और दूध देने वाली गाएं, भैंसे बाँधी जाती है इसी खण्ड से मिली हुई एक बैठक है जिसमें माधोशरण खाट रात दिन बिछी रहती है, तथा मेहमान आदि आव ठहरा करते हैं। बीच में एक बड़ी सी चौकी पड़ी रहती जिस पर मौका पाकर बच्चे अधिकार कर लेते हैं और तर तरह के खेल खेलते हैं। जब तक माधोशरण रहते हैं तब त लड़के प्राय: नहीं आते पर इधर उनके चले जाने से लड़ की खूब बन आई थी। चौकी पर ही लुकाछिपी का खेल हो गया था। चौकी के नीचे घुस घुस कर और उसे उठा उ कर लड़कों ने उसे उसके स्थान से बहुत दूर हटा दिया थ अगर कोई और अवसर होता तो माधोशरण लड़कों को ख लेते और उन्हें बिना मारे न छोड़ते। पर आज लड़कों से कहने का वे साहस नहीं कर सके। लड़कों ने समझा कि ब

बरके आए हैं, दावत खाकर आए हैं, दुलहिन लेकर आए हैं, खूब खुश हैं; इसलिये कुछ बोलेंगे नहीं। वे चाहते तो खेलते रहते पर दुलहिन देखने की उत्कट इच्छा से सब के सब मकान के जनाने भाग की तरफ दौड़ते हुए जा पहुँचे। इधर माधोशरण ने बिना प्रयास ही यह बला दूर हुई देख संतोष की साँस ली और अपनी पहले ही से बिछी खाट पर मुंह ढक कर लेट रहे। उनके अन्य साथी चौकी पर बैठ गये।

स्त्रियों में बड़े जोरों से गाना बजाना हो रहा था। दो वृद्ध महिलाएं दरवाजे पर बैठी बातें कर रही थीं—"कल नहीं आए। थोड़े से आदमी तो गए ही थे समधी ने खातिर करने के लिए एक रोज और रख लिया होगा। लेकिन आज जरूर आ जायेंगे। बहू के स्वागत की तैयारियाँ हो चुकी हैं, बस खबर आती जाते हैं। लोग तो यही कहते हैं कि बड़ी अच्छी बहू है देखें कैसी निकलती है।"

एकाएक लड़कों को घर में घुसने की चेष्टा करते देखकर उनमें से एक ने कहा—"भाई लड़कों के मारे तो नाक में दम आगया है। सिरसा में ही ऐसे लड़के पैदा होते हैं या सब जगह।"

दूसरी ने कहा—यहां क्या लड्डू बटता है जो दौड़े चले आते हो।

एक लड़के ने कहा—लड्डू बटेगा ही।

दूसरे ने कहा—मैं लड्डू खड्डू न लूँगा मैं तो सिर्फ दुलहिन देखने आया हूँ।

तीसरे ने कहा हम भी नई दुलहिन देख लेंगे तो क्या तुम्हारा कुछ बिगड़ जायगा।

एक स्त्री ने जवाब दिया—अरे पागल तो नहीं हो गये हो अभी दुलहिन कहाँ आई!

लड़के ने कहा—बहकाओ मत, बहकाओ मत! आगई है। बराती लोग बैठक में डटे हैं। बहू न आती तो वे कैसे आ जाते।

लड़कों के मुख से ये बातें सुनकर वे दोनों स्त्रियां उस स्थान पर पहुंची जहां गाना बजाना हो रहा था और चिल्ला कर बोलीं—तैयार हो जाओ, दुलहिन आरही है।

सब स्त्रियाँ आभूषणों की मन्द ध्वनि से एक दूसरी का मन हरती हुई इधर से उधर दौड़ने लगी।

एक घंटा होगया! दो घंटा हो गया! तीन घंटा होगया! आरती का दीपक बुझ गया! गोबर के गणेश जी सूख गये! कलसे का पानी ढरक गया! दुलहिन नहीं आई।

अब तो स्त्रियां बेचैन हो उठीं। आखिर बात क्या हुई कि दुलहिन नहीं आई। सिरसा के पंडितों में यह कायदा है कि जब तक दुलहिन न आ जाय पहले से आए हुए बरातिओं से कोई बात नहीं करता और न वे अपने अपने घरों में घुसने पाते हैं। सब को दुलहिन की पालकी के साथ खड़ा करके घार

आती है तब और कुछ होता है। पर आज यह कायदा टूट गया। स्त्रियों के एक दल ने आगे बढ़ कर माधोशरण से पूछा—"दुलहिन कहां रह गई?"

"पता नहीं"

"ऐं! क्या कहते हो पता नहीं?"

"हां, अभी सब मालूम हो जायगा। जाओ अपना अपना काम करो।"

औरतों का यह दल तो कुछ सोच समझ कर वापस लौट गया। पर माधोशरण की पत्नी से न रहा गया। पतोहू देखने के लिए उसका हृदय उल्लसित हो रहा था। एक एक मिनट एक एक वर्ष के समान बीत रहे थे। वह व्याकुल हो उठी पति के पास जाकर पूछा—"क्या कहते हो? साफ साफ कहो?"

"दुलहिन नहीं आएगी, गाना बजाना बन्द करो।" माधोशरण ने बड़ी मुश्किल से कहा।

"क्यों नहीं आएगी?"

"मर गयी।"

"कब मरी?"

"बिदा के दिन।"

बीमार थी?"

नहीं।"

"फिर कैसे मरी?"

"मौत आगई मर गई। बस बहुत मत पूछो। मेरा चित्त ठिकाने नहीं है।

पत्नी चोट खाए हुए कुत्ते के समान पूँ पूँ करके स्त्रियों में जाने लगी कि माधोशरण ने कहा—"ठहरो! रोओ मत! उसका मर जाना ही अच्छा था। हाँ, यह बताओ श्यामसुन्दर यहाँ पहुँचा या नहीं।"

"नहीं।"

"जाओ! चुपचाप बैठो! रोने से काम न चलेगा" यह कहते कहते माधोशरण की आँखे भी डबडबा आई।

"लड़का भी गया! पतोहू भी गई! क्यों?"

"अभी तो यही समझना चाहिए।"

जहाँ कुछ देर पहले सङ्गीत फूटा पड़ता था वहीं घोर उदासी छा गई। कुछ स्त्रियाँ रोने लगीं। कुछ की आँखें डबडबा आईं। कुछ अपने घरों को चली गईं। कुछ आपस में काना फूसी करने लगीं। रङ्ग में भङ्ग होगया।

सातवां परिच्छेद

गुरुआइन जी और पँडाइन जी

सिरसा में अगर कोई दर्शनीय चीज़ है तो वह गङ्गा का किनारा है। बरसात, जाड़ा, गरमी, तीनों मौसम यहाँ जिस प्रकार अपना बल विक्रम दिखलाते है वैसा शायद ही कहीँ दिखलाते हों। बरसात में जब गङ्गा बढ़ती हैं, पूर्वा हवा चलती है, मटमैली लहरें उठती हैं, ऊपर से बादल गरजते हैं तो देखते ही बनता है। ऐसा जान पड़ता है मानों सिरसा किसी तूफानी समुद्र के किनारे एक छोटा सा गाँव है। जाड़े में यह सब पानी कम होकर गङ्गा की एक निर्मल धारा बहती है और उसके दोनों तरफ हरे भरे खेत रात रात भर ओस में नहाते रहते हैं जिसकी वजह से दोपहर की सूर्य्य किरणें भी उस स्थान पर चन्द्र किरणों के समान शीतल ही प्रतीत होती हैं और जब कुहरा पड़ता है तो ऐसा जान पड़ता है मानों प्रकृति अपनी चलनी में बरफ का पिसान चाल रही है। गरमी में यह कुछ नहीं होता। चारों तरफ रेत ही रेत दिखाई पड़ती है और इतनी तपती है कि उसकी आँच से गङ्गा जी का जल भी खौल उठता है। प्रातः सायं यह रेत एक विचित्र प्रकार की

शीतलता धारण करती है और हर एक को गङ्गा के किनारे चलने फिरने को ललचाती है। पर आज कल के जमाने में केवल इतनी ही बातों से कोई स्थान दर्शनीय नहीं कहा जा सकता। इसलिए इस स्थान की महिमा में कमी न आने देने के लिए यह भी बता देना आवश्यक है कि यह स्थान स्त्री समुदाय से सदैव सुसज्जित रहता है जिससे विलासियों को, प्रेमियों को और कवियों को भी यहाँ भ्रमण करने में विशेष आनन्द आता है। लोग चाहे कुओं पर ही नहाएं, स्त्रियाँ गङ्गा में ही नहाती हैं। इसका कुछ कारण तो उनकी स्वभाविक धर्म-रुचि है और कुछ गृह कारागार से क्षणिक मुक्ति की इच्छा। दूसरी बात इस लिए कही कि प्रातः सायं नित्य क्रिया से निवृत्त होने के लिए भी वे इसी पवित्र स्थान की ओर प्रस्थान करती हैं। उस समय सिरसा के प्रत्येक निवासी के सम्बन्ध में कुछ न कुछ टीका टिप्पणी होती है। कभी किसी को और कभी किसी को इनकी गरमागरम बहसों का विषय बनना पड़ता है। यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि आज कल इनका विषय माधोशरण का कुटुम्ब है। इसीलिये माधोशरण की पत्नी ने सबेरे शाम और दोपहर को भी गङ्गा का आना जाना बन्द कर दिया है।

आज गुरुआइन जी और पड़ाइन जी में बहुत बातें हुईं। और बड़ी बेसिर पैर की हुईं। यहाँ तक कि सुनने वालियाँ ऊब कर, नहीं ऊबता कौन है? देर हो जाने के भय से एक

एक करके चली गईं। गुरुआइन जी यह चाहती भी थीं क्योंकि उन्हें पंड़ाइन जी से एक बड़ी ही गुप्त बात कहनी थी, और बिना उसके कहे उनसे रहा नहीं जाता था। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि यदि सुनने वालियाँ चली न जायँगी तो वे सब के सामने ही कह देंगी, होगा जो होना होगा। गुरुआइन जी पंड़ाइन जी के कान में यह बात कह कर अपना हृदय हलका कर सकती थीं पर मुश्किल तो यह थी कि पंड़ाइन जी को सुनाई बहुत कम पड़ता था, इसलिये उनसे जोरसे बोलना पड़ता था और जोर से बोलने में हर एक सुनती।

गुरुआइन जी का परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। ये पंडित कालीचरण की पत्नी हैं। उम्र में पति से ज्यादा ही होंगी कम नहीं। पर अभी इनके दो एक दाँत बाकी हैं और बाल सफेद नहीं हुए हैं। पंड़ाइन जी की आयु लग भग पचास के होगी, ये अपने बालकाल में ही विधवा हो गई थीं पर कहा जाता है इन्होंने अपना रंडापा झेल लिया। कम से कम पंड़ाइन जी के मुंह पर तो सब लोग यही बात कहते हैं। पंड़ाइन जी सफेद धोती पहनती हैं, चन्दन लगाती हैं, सिर मुड़ाती हैं और जब चाहती हैं तीर्थ व्रत करने भी निकल जाती हैं।

पंड़ाइन जी का यह वेष देखकर गुरुआइन जी अपनी गुप्त बात भूल गईं और बोलीं — बहिन तुम सबसे अच्छी हो?

पंड़ाइन जी — मैं राँड किस काम की हूं। भाग्यवान तुम हो कि अभी तुम्हारा अहिवात बना है।

गुरुआइन जी—पर क्या यह सुहागिन की उमर है बहिन ! अब चूड़ी पहनते और सिन्दूर लगाते लाज लगती है, क्या करूँ लोक दिखावे के लिये सब करना पड़ता है।

पड़ाइन जी—यह सब बड़े भाग्य से होता है। ऐसा न कहना चाहिए, बहिन !

गुरुआइन जी—भाग्य तो मेरा कभी फूट गया। यह दुर्भाग्य का फल है।

पड़ाइन जी—यह तो मैंने भी सुना है कि गुरु महाराज एक बार मर रहे थे पर मरते मरते बच गये।

गुरुआइन जी—ये नहीं मरेंगे बहिन ! ये मुझे मार कर ही मरेंगे।

पड़ाइन जी—राँड बन कर रहना क्या कोई अच्छी बात है ?

गुरुआइन जी—रहते बने तो अच्छी बात क्यों नहीं है।

पड़ाइन जी—मैं तो सब भोगे बैठी हूँ। भगवान किसी को यह दुःख न दे।

गुरुआइन जी—जवानी में न दे।

पड़ाइन जी—और बुढ़ाई में।

गुरुआइन जी—बुढ़ाई उम्र में जितना रँडापा अच्छा लगता है उतना और कुछ नहीं। जान पड़ता है मेरी यह साध न पुरेगी।

पड़ाइन जी—पति परमेश्वर है, उसका अमङ्गल नहीं चेतना चाहिये।

गुरुआइन जी—ठीक है, लेकिन ये गुरु महाराज मेरे पति नहीं हैं। आज तक यह बात किसी से नहीं कही पर तुमसे कहती हूँ। जब से मैंने सुना है कि श्यामसुन्दर की बहू को इन्हीं ने नहीं आने दिया तब से मेरा शरीर इनके ऊपर भस्म हुआ जा रहा है।

पड़ाइन जी ने उत्सुकता पूर्वक पूछा—तो क्या तुम्हारा इनका ब्याह नहीं हुआ ?

गुरुआइन जी—नहीं, सुनो, सब कहूँगी। ये मेरे पति के गुरु थे। जैसे तुम लोगों के हैं। उनको गुरु मन्त्र दिया था। जब घर जाते थे तो पति मुझसे इनकी सेवा करने के लिये कह कर अपने काम पर चले जाते थे। एक दिन बल पूर्वक इन्होंने मेरा धर्म बिगाड़ दिया। मैं कुछ कर न सकी। इसी बीच में इत्तिफाक से मेरे पति आगये। उनकी आँखें लाल होगईं, ओठ काँप उठे। पर उन्होंने कुछ कहा नहीं। मुझसे बोले—बस जो हुआ सो अच्छा हुआ, अब चुपचाप इनके साथ निकल जाओ। मेरे दो छोटे छोटे बच्चे थे। उनको छोड़कर मुझे इनके साथ आना पड़ा। मैं ही जानती हूँ कि किस प्रकार सीने पर पत्थर रख कर आई हूँ। अब भी जब उन बच्चों का और पति का ख्याल आता है तो कलेजा भभक उठता है।

पड़ाइन जी—आश्चर्य है। पर यह बात किसी को मालूम क्यों नहीं हुई ?

गुरुआइन जी—मालूम कैसे हैं ती, मुझे लेकर ये वहां से चले आये, यहां सिरसा में बस गये और सब से कह दिया कि मैंने ब्याह कर लिया। यह मेरी औरत है।

पड़ाइन जी—तुम इनके साथ चली क्यों आई ?

गुरुआइन जी—क्या करती ? कहाँ जाती ?

पड़ाइन जी ने एक दीर्घ निश्वास लिया फिर कहा—हाँ श्यामसुन्दर की बहू के बारे में क्या सुना ?

गुरुआइन जी—यही तो कहने जा रही थी पर वह कह दिया जो कभी न कहना चाहिए। किसी से भूल कर भी इस बात का जिक्र न करना बहिन !

इसी समय सिरसा गाँव की तरफ से कोई आदमी आता हुआ दिखाई पड़ा। गुरुआइन जी ने इधर उधर देख कर कहा—"जब जब उस बात को कहती हूँ कोई न कोई आही जाता है।

"क्या बात है गुरुआइन जी।" आने वाले ने दूर ही से कहा।

"ऐं यह तो श्यामसुन्दर की सी आवाज जान पड़ती है ?"

"हाँ मैं ही हूँ। क्या मेरा यहां आना तुमको अच्छा नहीं लगा।"

अब श्याम सुन्दर बहुत ही करीब आचुका था। पँड़ाइन जी ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—"घर से आरहे हो बेटा ?"

"नहीं।"

"कहाँ चले गए थे।"

"इलाहाबाद।"

"सुनाई पड़ता है तुम्हारी बहू मर गई ! सच है ?"

"नहीं कह सकता। किससे सुना ?"

"तुम्हारी माँ से।"

"कैसे मरी ? विष खाकर या कुएँ में कूद कर ?"

गुरुआइन जी से अब न रहा गया। उन्होंने कहा—मरी नहीं मगर अब वह तुम्हारे लिए मरी ही है।

"क्यों ?"

"तुम्हारे गुरू महाराज उसको विन्ध्याचल छोड़ आए है।"

श्याम सुन्दर ने जरा आश्चर्य के साथ पूछा—तो वह अपने बाप के यहाँ नहीं पहुँची।

गुरुआइन जी—बाप के यहां ले गये थे पर उसने भी नहीं रखा।

श्यामसुन्दर—विन्ध्याचल में उसे कहां पर छोड़ा ?

गुरुआइन जी—उसी मुसलमान के पास।

श्यामसुन्दर का शरीर गरम हो उठा। वह गंगा के किनारे किनारे डगमगाता हुआ पूर्व की ओर चल पड़ा।

"इस अंधेरी रात में कहां जाओगे बेटा ?" पड़ाइन जी ने चिल्ला कर कहा।

"जहाँ मेरा भाग्य ले जायगा।"

"बुढ़ाई उमर में बाप को छोड़ दोने ?"

"बाप को मेरी जरूरत नहीं है। गुरु महाराज उनके मुंह में तुलसी सोना रख देंगे। इसके सिवाय और वे कुछ चाहते भी नहीं।"

जहाँ तक देख सकीं गुरुआइन जी और पड़ाइन जी श्यामसुन्दर को देखती रहीं। पैरों की आहट से उन्हें जान पड़ा कि वह स्टेशन की ओर जायगा।

जब फिर शान्ति छा गई तो पड़ाइन जी ने कहा—हाँ कहो क्या बात है।

गुरुआइन जी—सुना है उस लडकी को छ महीने का गर्भ है। इसी से उसके बाप ने नहीं रखा। पर यह बात तो पीछे से मालूम हुई। असली कारण तो यही है कि उसने मुसलमान का पानी पी लिया था।

पड़ाइन जी—रेल की सवारी में तो मुसलमान का छुआ खाना भी खाना पड़ता है।

गुरुआइन जी—पड़े या नहीं, तुम्हारे गुरु महाराज को दाल भात में मूसरचन्द बनने की क्या पड़ी थी। माधोशरण की खुशी होती लाते खुशी होती नहीं। इस तरह ऐब ढूंढने से तो कोई अछूता न बचेगा। शायद जितने हिन्दू हैं सब को धर्म छोड़ देना पड़े और तुम्हारे गुरु महाराज को तो नरक में भी ठौर न मिलेगा।

पड़ाइन जी ने कहा—ठीक है बहिन, जिसका छिपा है उसका चला जाता है जिसका खुल गया उसकी आफत है। देर होरही है चलो घर चलें।

इसके बाद न मालूम क्या क्या सोचती हुई हुई दोनों ने अपना रास्ता लिया। अलग होते समय पड़ाइन जी ने कहा—"अब तक अनजाने से जो हुआ सो हुआ पर अब आज से मैं तुम्हारा छुआ पानी न पिऊंगी और गुरु महराज को उनका मन्त्र वापस कर दूंगी।" गुरुआइन जी के प्राण सूख गये। उन्हें जान पड़ा मानों उन्होंने अपने हाथों अपना सर्वनाश कर लिया।

आठवां परिच्छेद

——:o:——

पंडित सुधानिधि शास्त्री

बनारस में विश्वनाथ की गली में एक बड़ा ही सुन्दर और नया मकान बना हुआ है। यह मकान बाहर से जितना बन्द मालूम होता है भीतर से उतना ही खुला है। एक बड़ा सा आँगन है आँगन के आधे हिस्से में हरी हरी दूब लगी है जो एक बड़े कालीन सी बिछी जान पड़ती है। आधे हिस्से में अंग्रेजी ढंग में क्यारियाँ काट कर मनोहर फूल लगाए गये हैं और बड़े बड़े गमले सजा कर रखे हैं। बीच बीच में फौव्वारे और सङ्गमरमर की तरह तरह की मूर्तियाँ हैं जिनके इधर उधर से बलखाती हुई कङ्कड़मयी छोटी छोटी गलियाँ लुकालुकी का खेल खेलती सी नज़र आती हैं। इस आँगन के चारों तरफ बड़े बड़े दालान हैं और दालानों से मिले हुए झाड़ फानूसों से तथा बहुमूल्य परदों आदि से सजे सुन्दर कमरे हैं। बाहर देखने से कोई अनुमान भी नहीं कर सकता कि यह मकान भीतर से इतना हवादार होगा। कहते हैं इस मकान में पहले गङ्गा जी की एक विशाल मूर्ति थी और यह एक बड़ा सा

मन्दिर था। धीरे धीरे इस मन्दिर को पंडित सुधानिधि-शास्त्री ने इस प्रकार अपना लिया कि किसी को पता भी न चला कि यह मन्दिर से मकान के रूप में कब और कैसे परिणत होगया। सुधानिधि शास्त्री धर्मशास्त्रों के महान ज्ञाता समझे जाते हैं। कई संस्कृत ग्रन्थों का अंग्रेजी में अनुवाद करके सात समुन्दर पार अमेरिका और योरुप आदि में भी ये अपनी कीर्ति का हवाई जहाज उड़ा रहे हैं। इन्हीं ग्रन्थों के बल पर ये मालामाल हो रहे हैं। बड़े बड़े अंग्रेज रोज इनसे मिलने आते हैं। अभी थोड़े दिन हुए लाटसाहब को इन्होंने दावत दी थी। इतने पाश्चात्य विचारों के होते हुए भी शास्त्री जी कट्टर हिन्दू होने का दावा करते हैं। अगर कोई अपनी विधवा बेटी का ब्याह करदे तो शास्त्री जी उसे जाति बहिष्कृत करने में सर्व प्रथम होंगे। अगर कोई चमार विश्वनाथ के मन्दिर में चला जाय तो शास्त्री जी उसका मूड़ कटवा लेंगे। पर अंग्रेजों को और मेमसाहबों को मय उनके खटाखट जूते के ये विश्वनाथ के मन्दिर में लिए फिरते हैं और कोई उंगली तक नहीं उठाता और कोई कहै भी तो क्या? "समरथ को नहिं दोष गुसाईं" लिखकर महात्मा तुलसी दास ने सब का मुंह बन्द कर दिया है। एक शब्द में शास्त्री जी एक अजीब जीव हैं। जिसमें इनका स्वार्थ सधे वह धर्म है। जिसमें तमाम जाति का कल्याण हो वह अधर्म है। समझने वाले इनके इस धर्म तत्व को समझते हैं। पर समझ कर वे क्या करेंगे। सिर की पगड़ी, मस्तक का

क्रन्दन, और कन्धे पर का दुपट्टा तीनों ब्रह्मा, विष्णु, महेश, की तरह शास्त्री जी के शरीर में बस कर उनकी रक्षा कर रहे हैं।

शास्त्री जी के घर में कुल तीन प्राणी हैं। वे, उनकी पत्नी और एक विधवा कन्या। घर का सारा काम काज पत्नी को ही करना पड़ता है क्योंकि वह हिन्दू धर्म के अनुसार पति की दासी है। यदि उसका काम कोई और कर दे तो उसके पुण्य में कमी आजायगी। शास्त्री जी जान बूझ कर अपनी पत्नी का परलोक नहीं बिगाड़ना चाहते। कन्या जब तक विधवा नहीं हुई थी तब तक उसका कुछ आदर था। पर विधवा होते ही वह एक ऐसी गाय समझ ली गई जो दूध न देगी केवल बंधे बंधे सानी खायगी। इसलिये उसको रात दिन एक कोठरी में बन्द रहना पड़ता है। गङ्गा नहाने और विश्वनाथ जी के दर्शन करने की भी उसको इज़ाजत नहीं है। स्त्री का पति ही परमेश्वर है, जब पति नहीं है तो पूजा पाठ सब व्यर्थ है।

ऊपर हम जिस घरका वर्णन कर आये हैं माँ और बेटी उसमें नहीं आने पातीं। वह केवल साहबों की दावत आदिके लिए है। ये मा और बेटी उस मकान के पीछे बने उसी के एक तङ्ग हिस्से में रहती हैं। जहाँ यह पता नहीं चलता कि सूर्य्य कब निकला और कब डूबा।

लेकिन आज शायद जीवन में प्रथम बार इन माँ और बेटी को उस खुले भवन में आने की आज्ञा हुई है। इसका कोई

विशेष कारण अवश्य होगा। आइए पाठक! देखें कि क्या बात है।

मकान के सब से अधिक सुन्दर और सजे कमरे में एक युवती एक महीन रेशमी साड़ी पहने एक पँलग पर लेटी है। जान पड़ता है साड़ी उसने अपने आप नहीं पहनी, पँलग पर लिटाने के बाद किसी ने उसको पहना दी है। आज कई रोज से वह इसी प्रकार लेटी है। दिन में दो बार सिविल सर्जन और जनाना अस्पताल की इनचार्ज एक मेम साहब उसे देखने आती हैं। पता नहीं यह युवती कौन है! इन माँ बेटियों को केवल पुन्य और परोकार के नाम पर उसकी सेवा करने को कहा गया है। इसी लिये ये दोनों अपने स्नेही शिशु के समान उसकी परिचर्य्या में लगी हैं।

आज उस युवती को कुछ होश हुआ है, ज्वर भी बिलकुल नहीं हैं, हाथ पाँव भी उसने हिलाये है और अब आँखे फाड़ फाड़ कर इधर उधर बड़े आश्चर्य्य से देख रही है।

उसकी इन चेष्टाओं को देखकर शास्त्री जी की पत्नी ने कहा—कैसी तबियत है?

युवती और भी आश्चर्य्य से इधर उधर देखने लगी।

शास्त्री जी की पुत्री ने कहा—बहिन तुम कौन हो?

"यह स्वर्ग लोक है?" उठकर बैठने की चेष्टा करते हुए युवती ने कहा।

माँ और बेटी दोनों आश्चर्य्य से एक दूसरे को देखने लगीं।

"तुम लोग कौन हो ? मेरी बोली समझते हो ?" युवती ने कहा।

"हम लोग मनुष्य हैं मनुष्य की बोली क्यों न समझेंगे ?"

"अच्छा अब समझी। मरी नहीं हूँ।"

"नहीं अब न मरोगी ?"

"अब न मरूँगी ? जीने से क्या लाभ ?"

"पहले यह बताओ हो कौन ?"

"बिना जाने ही आप लोगों ने मुझे आराम दे रक्खा है ?"

"हाँ।"

"मैं अनाथिनी हूँ। मेरा इस संसार में कोई नहीं है, नहीं नहीं है। मेरा स्वामी है।"

"तुम्हारे स्वामी का क्या नाम है ?"

"ऐं ! यह किसका घर है ? हिन्दू का या मुसलमान का ?"

"हिन्दू का। क्यों ?"

"हिन्दू का नहीं जान पड़ता ? हिन्दू का होता तो मुझसे मेरे स्वामी का नाम पूछतीं ? स्वामी का नाम कोई लेता है ?"

कहते कहते युवती कुछ उत्तेजित हो गई। उठकर बैठ गई और बोली—"तुम स्त्री होकर मुझसे कपट न करना। स्त्री का स्त्री से कपट न करना चाहिए। सच कहो अब्दुल्ला तुम्हारा कौन है।"

"जान पड़ता है अभी तुम्हारा चित्त ठिकाने नहीं है ?"

"खूब ठिकाने है ? अभी तक कुछ बोली नहीं थी। इसी से कहती हो क्या कि चित्त ठिकाने नहीं है। मैं मारे डर के नहीं बोली थी। सोच रही थी कि बोलकर अपनी आफत न बुला लूं। इसी से चुप थी। पर अब देखती हूँ कि आफत टलने वाली नहीं है। कुछ समझ में नहीं आता कि कहाँ हूँ ? यहां कैसे आई हूं। तुम दोनों देखने में बड़ी भोली जान पड़ती हो ? क्या दया करके बताओगी कि कहाँ हूं और क्यों हूँ ?"

युवती की बातें सुन कर माँ बेटी दोनों की आँखे डबडबा आईं और वे बोलीं—"जान पड़ता है तुम पर बड़ी बड़ी मुसीबतें पड़ी हैं।"

"जो पूछती हूँ वह नहीं बताती हो ! केवल बातों में टाल कर अपना कौन सा हित साधन करना चाहती हो ?"

शास्त्री जी बगल के कमरे में निद्रा ले रहे थे। रोगी के कमरे में इस प्रकार बातें होती सुनकर वे जग पड़े और तुरत उठकर वहां गये।

"क्या हाल है ? कैसी तबियत है ? हें हें बैठी क्यों हो ! लेटी रहो। यहां किसी बात का डर नहीं। घबड़ाओ मत।"

"पिता के समान, नहीं नहीं परमेश्वर के समान मेरी रक्षा करने वाले आप कौन हैं ?"

"मैं पंडित हूँ। बड़ा नामी पंडित हूँ। सारा संसार मुझे जानता है। बनारस का बच्चा बच्चा मुझे पहचानता है।

शायद तुमने भी मेरा नाम सुना हो। लोग मुझे सुधानिधि शास्त्री कहते हैं।"

"हाँ सुना है।"

"कहाँ सुना है?"

"यह न बताऊंगी?"

"न बताओ!"

थोड़ी देर तक सब लोग चुप रहे और एक दूसरे की ओर गौर से देखते रहे। इसके बाद चन्द्रकला ने कहा (पाठक समझ गये होंगे कि यह युवती चन्द्रकला के सिवाय और कोई नहीं है)—"मैं आप के यहाँ कैसे आ गई?"

शास्त्री जी—यह लम्बी कथा है। पर तुम्हारी तसल्ली के लिए संक्षेप में कहे देता हूँ! यहाँ एक वृद्ध साधु रहते हैं। वे प्रतिदिन प्रात: काल नाव में बैठ कर गङ्गा पर नित्य क्रिया आदि से निवृत्त होने जाते हैं। उन्होंने एक बहते हुए फूल की तरह बीच गङ्गा में तुम्हें पाया। पानी में लगातार कई घंटे पड़े रहने से तुम्हारी त्वचा फूल उठी थी पर तुम्हारी कान्ति ज्यों की त्यों बनी थी। तुम्हें होश नहीं था, लेकिन तुम्हारे हाथ पांव 'चला कर छोड़ दी गई मशीन' की तरह, एक नियमित गति से अपना काम करते जाते थे और तुमको डूबने नहीं दिया था। साधु महाराज तुम्हें देख कर अपना काम भूल गये। वे हैं हीं बड़े दयालु इसीसे तुम्हें लेकर शीघ्र अपनी कुटी में आये। पर पैसा न होने से वे तुम्हारी उचित चिकित्सा न कर सकते थे।

मैं साधु सन्तों की सहायता में सदैव तय्यार रहता हूँ। मेरा यह स्वभाव उन्हें खूब मालूम था इसलिये वे फौरन मेरे पास आए और सब किस्सा कह सुनाया। उसी के फल स्वरूप तुम यहाँ सोई हो।

चन्द्रकला—लेकिन साधु महराज ने मुझे बचाकर कोई पुन्य का काम नहीं किया।

शास्त्री जी—पुन्य का काम किया या नहीं इसका निश्चय करना हमारा और तुम्हारा काम नहीं है। हमको तो केवल इस बात से सन्तोष करना चाहिये कि उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन किया।

चन्द्रकला—वह कर्त्तव्य पालन किस काम का जिसकी वजह से दूसरों के कर्त्तव्य पालन में विघ्न पहुंचे।

शास्त्री जी—गङ्गा में डूब मरना किसी का कर्त्तव्य नहीं है।

चन्द्रकला—अच्छा यह बताइए कि यदि किसी असहाया अबला पर महान धर्म संकट आ पड़े, इज्जत जाती हो तो उसका क्या कर्त्तव्य है?

शास्त्री जी—जब धर्म संकट और प्राण संकट दोनों बराबर मात्रा में उपस्थित हों तब प्राण देकर धर्म बचालेना अच्छा है। लेकिन जब केवल धर्म संकट हो तो कोई और उपाय करना चाहिए। प्राणों को जोखिम में डालना ठीक नहीं।

चन्द्रकला—वही तो पूछती हूँ, क्या उपाय करना चाहिए ?

शास्त्री जी - कौशल से काम लेना चाहिए।

चन्द्रकला—कौशल क्या ?

शास्त्री जी—छल, कपट, आदि।

चन्द्रकला—लेकिन छल और कपट करना धर्म तो नहीं है।

शास्त्री जी—जिससे धर्म की रक्षा हो वह धर्म से भी बड़ी चीज है।

चन्द्रकला—लेकिन छल और कपट की कोई प्रशंसा तो नहीं करता।

शास्त्री जी—ये चीज़ें थोड़ी मात्रा में और खास खास मौकों पर ही अच्छी होती हैं, हमेशा नहीं। जैसे शराब और अफीम दवा में प्रशंसनीय है पर अन्यत्र निन्दनीय।

चन्द्रकला—आप पंडित हैं, ज्ञानी हैं। मैं आप से बहस नहीं कर सकती पर यह बताइए कि यदि छल और कपट से धर्म संकट दूर न हो तो ?

शास्त्री जी—तो यथाशक्ति शत्रुरूपी धर्म संकट से युद्ध करना चाहिए। आत्महत्या कर लेना तो मानों मैदान से भाग जाना है। इसीलिये धर्मशास्त्रों में आत्महत्या को पाप और कायरता कहा है।

चन्द्रकला - यदि कोई हाथ पाँव बाँध कर विवश कर दे तो ?

शास्त्री जी—आह ! तुम समझती नहीं हो। धर्म तो आत्मा का होता है शरीर का नहीं। शरीर के अपवित्र होने से आत्मा अपवित्र नहीं होती।

चन्द्रकला—आपकी बात समझ में नहीं आती।

शास्त्री जी—धीरे धीरे सब आ जायगी।

कमज़ोरी के कारण केवल इतनी बात करने से ही चन्द्रकला थक गई और उसके शरीर में पसीना आगया। ज्यादा बैठना उसके लिए कठिन हो गया। वह बिस्तर में गिर पड़ी और पड़े पड़े सोचने लगी "इतने बड़े पंडित होकर कैसी बातें कहते हैं ? शरीर के अपवित्र होने से आत्मा अपवित्र क्यों नही होगा ? शरीर आत्मा का घर है। जब घर अपवित्र होजायगा तो उसमें रहने वाला पवित्र कैसे रह सकता है ?

शास्त्री जी अपनी पत्नी और बेटी को चन्द्रकला को चुप-चाप पड़ी रहने देने का आदेश देखकर फिर अपने कमरे में चले आये और मन ही मन सोचने लगे—"रूप रङ्ग से जान पड़ता है कि यह किसी बड़े ऊँचे घराने की कन्या है और बात चीत से जान पड़ता है कि बड़ी पढी लिखी और बुद्धिमान है। मेरा जीवन बड़ा निरस हो रहा था। अब एक नया युग आरम्भ होगा। अच्छी चिड़िया बैठे बिठाए पिंजड़े में आगई। तर्क वितर्क बहुत करती है यह अच्छा ही है। बातों ही बातों में इसे अपने मन के माफिक बना लूँगा। पढ़ी लिखी स्त्रियों में

यही तो मजा है। चार लच्छेदार बातें कीं, बस शरबत घुल गया। इतना सुन्दर तन और यौवन लेकर गंगा में डूबी जा रही थी। जान पड़ता है किसी ने कहीं छेड़छाड़ की होगी हाथ वाथ पकड़ा होगा बस पानी में कूद पड़ी। उस बेवकूफ ने भी न समझा कि पर्दा लिखी स्त्रियों से इस प्रकार छेड़ छाड़ नहीं की जाती। यह व्यवहार तो गँवार स्त्रियों के साथ किया जाता है। पर मेरे हक में उसने भी अच्छा ही किया ? लासा किसी ने लगाया शिकार किसी को मिला ? खूब। गंगा जी का मन्दिर ढहाकर यह मकान बनाया है। लोग कहते हैं बुरा किया है। पर गंगा जी ने इस मकान के योग्य एक सुन्दरी देकर मानों इस मकान के साथ अपनी सहानुभूति प्रकट की है। मैं धर्माचार्य्य हूँ। जो मैं कहूँगा वही मनुष्य का धर्म होगा।"

नवां परिच्छेद

जंगल में मंगल

सुनसान जङ्गल में एक बड़े बटवृक्ष के नीचे एक महात्मा जी धूनी रमाए और जटा जूट बढ़ाए बैठे हैं। दूर से देखने से ऐसा जान पड़ता है मानों मनुष्य के रूप में कोई साँड़ बैठा है। चौड़ा मस्तक, विस्तृत छाती, भारी तोंद, कुन्दे सी जाँघें, मांस भरी भुजाएँ, जहाँ उनके वाह्य आकार प्रकार का परिचय देती हैं वहीं छोटी छोटी और भीतर को धँसती जाती हुई आँखें उनके अन्तर्जगत को छिपाने की भरपूर चेष्टा सी करती जान पड़ती हैं। आयु ४० वर्ष से ऊपर न होगी पर दर्शन के लिए आने वालों का यही कहना है कि बाबा जी पूरे ५०० वर्ष के होगए हैं, बड़े सिद्ध हैं, त्रिकालदर्शी हैं जो पूछो सब बता देते हैं। हजारों को इनके आशिर्बाद से व्यापार में लाभ हुआ है, हजारों को इनके प्रसाद से बच्चे हुए हैं। लाखों की मनोकामनाएँ पूर्ण हुई हैं।

बाबा जी के दाहिने तरफ नये आगन्तुक बैठे हैं, बाईं तरफ वे लोग हैं जिनपर बाबा जी की खास कृपा है, सामने स्त्रियाँ बैठी हैं और पीछे उनके चेले खड़े हैं। बरजी से इतनी दूर भी

बाबा जी के चारों तरफ इतनी भीड़ का होना इस बात का प्रमाण है कि ये बहुत पहुँचे हुए हैं।

चेलों में इस प्रकार कानाफूसी हो रही है—

पहला—यार वशीकरण मन्त्र सीखना चाहिए।

दूसरा—वशीकरण मन्त्र यही है कि गुरू बन जाओ।

तीसरा—इससे क्या होगा?

दूसरा—देखो न, ये सामने बैठी हुई पुतलियाँ बाबा जी की ओर तो बड़े प्रेम से देखती हैं और हम लोगों से आँखें मिलाने में शर्माती हैं।

चौथा—क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है कि ये स्त्रियाँ हम लोगों की तरफ भी देखें।

दूसरा—है क्यों नहीं।

पाचवाँ—क्या है?

दूसरा—स्त्रियों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए बहुत से तरीके हैं।

चौथा—यार कोई मुझे भी बताओ।

दूसरा—पहले यह देखो कि तुम सुन्दर हो या नहीं!

छठा—सुन्दर तो ऐसे हैं कि बँदरिया भी इन्हें देख कर पेड़ पर चढ़ जाय।

दूसरा—फिर यह देखो कि तुम्हारे पास कोई आभूषण है या नहीं? क्योंकि आभूषण देखकर स्त्रियों के मन में लालच उत्पन्न होता है।

छठा—आभूषण ही होता तो चेला क्यों आकर बनते।

दूसरा—आभूषण न सही, यह देखो कि तुम्हारे पास कोई ऐसा भड़कीला वस्त्र है या नहीं जो किसी के पास न हो।

पहला—यार, कोई गरीबी नुसखा बताओ।

दूसरा—कुछ नहीं है तो फिर हाथों में सुन्दर सुन्दर फल या फूल लेकर उन्हें दिखाओ।

छठा—और फल फूल भी न हो तो?

दूसरा—तो कोई चमत्कार दिखाओ।

पहला—चमत्कार क्या?

दूसरा—कोई बहादुरी का काम, कोई अजीब काम?

दूसरे की ऐसी बातें सुनकर सब चेले इधर उधर खयाल दौड़ाने लगे कि इस समय ऐसा कौन सा काम हो सकता है जिसको करके वे अपनी बहादुरी का परिचय दे सकते हैं। इतने में उन्हें एक युवक आता दिखाई पड़ा। अपने गौर वर्ण, अँग्रेजी ढंग की पोषाक, काली गोल टोपी और मुण्डे जूते से वह नवशिक्षित विद्यार्थी जान पड़ता था। ऐसे विद्यार्थिओं से साधु मण्डली अकसर डरा करती है। क्योंकि ये उनकी ऐसी ऐसी पोलें खोलते हैं कि ये जवाब नहीं दे सकते। इस युवक को चेलों ने एक भयङ्कर शत्रु के समान देखा। शत्रु का दमन करना कम बहादुरी का काम नहीं है। चेले सोचने लगे—यदि यह यहाँ आजाय और कुछ इधर उधर की बातें करे तो इससे झगड़ा किया जाय। बाबा जी तो कुछ बोलेंगे नहीं

और बोलेंगे भी तो बाद को खुश कर लिया जायगा। इस समय तो मजा आयगा। इसका मजाक उड़ाया जायगा, इसकी टोपी इधर से उधर फेकी जायगी, इसे पीटा जायगा। पर यह भी है कि यह कुछ न बोले। कुछ न बोले तब देखा जायगा। ऐसी बाते कही जायगी कि यह बोले।

किन्तु युवक करीब आने से ऐसा जान पड़ा कि चेलों का यह पौरुष प्रदर्शन शायद ही हो सके। उसकी चाल से स्पष्ट होगया कि वह यहाँ ठहरेगा नहीं। मालूम नहीं कहाँ जायगा?

"अब क्या करना चाहिए? क्या उपाय होकि यह युवक यहाँ रुक जाय और हमको चमत्कार दिखाने का मौका मिले।" पहले चेले ने दूसरे से कहा।

दूसरा युवक की तरफ ऐसे देखने लगा मानों वह अपनी दृष्टि से उसकी चाल रोक देगा। लेकिन युवक ने बाबा जी को और उनकी मण्डली को देखा तक नहीं। उनके पास से उनकी तरफ बिना देखे हुए वह ऐसे निकल गया जैसे कोई रास्ते में खेलते हुए बालकों के खेल की ओर ध्यान न देकर निकल जाता है।

लेकिन जब मनुष्य के दिल में कुछ कर दिखलाने की इच्छा उत्पन्न हो जाती है तो हजारों उपाय आप से आप मालूम हो जाते हैं। चेलों को भी एक मौके का उपाय सूझ पड़ा। वे उस युवक पर पागल कुत्तों की भाँति टूट पड़े। उसे गिरफ्तार कर लिया,

उसकी टोपी उतार कर फेक दिया और उसे पकड़ कर महात्मा के पास ले चले। यह दृश्य देखकर आगन्तुक और स्वयं बाबा जी भी यह न समझ सके कि इसका क्या अर्थ है।

स्त्रियों में एक कुछ साहसी और बात चीत करने में निर्भय अधेड़ रमणी भी थी। अपनी मण्डली पर अनुचित तरीके से दृष्टिपात करते देखकर वह चेलों के ऊपर मन ही मन बहुत कुढ़ रही थी। उसका हृदय उनको कुछ फटकार सुनाने के लिए होंठ तक आता था और लौट जाता था। कहीं ऐसा न हो कि वह कुछ कह दे और उसके काम में विघ्न पड़ जाय जिसके लिए वह इतनी दूर से आई है। इसीलिये यह चुप थी। पर अब उसको एक उचित बहाना मिल गया। वह बोली—भाई, ऐसे सीधे और देवता के समान पूजनीय बाबा जी के चेलों का यह काम देखकर आश्चर्य्य होता है? भला उस आदमी ने क्या बिगाड़ा जो उसको इस प्रकार छेड़ रहे हैं। यही हाल रहा तो इधर का रास्ता बन्द हो जाने में क्या सन्देह है?

किसी स्त्री को अपने अनुकूल बनाने का तरीका यह है कि आप उसकी हाँ में हाँ मिलावें। बाबा जी इस विद्या में निपुण न हों तो और कौन होगा? एक स्त्री के मुख से चेलों की शिकायत सुनकर वे चुप कैसे रह सकते थे? बोल उठे—बड़े मूर्खों से काम पड़ा है। ऐसे चेलों से ता बिना चेलों के अच्छा है। अरे दुष्टो! शैतान के बच्चो! भाग जाओ यहाँ से।

स्त्रियाँ इस बात को जानती हैं कि जब कोई बड़ा अपने छोटों पर बिगड़ता है तो मना करनेसे चाहे माने न, खुश जरूर होता है। इसलिए एक को छोड़कर शेष ने कहा—जाने दीजिए महाराज ! आप गुस्सा करेंगे तो संसार का नाश हो जायगा, आपका गुस्सा करना ठीक नहीं है।

एक स्त्री के अलावा अनेकों को खुश रखना अच्छा है। यह सोचकर गबा जी ने अपना पूर्ववत रूप बना लिया। पहले उनका उग्र रूप देखकर चेले कुछ शङ्कित हुए थे। अब स्त्री समुदाय को अपने पक्षमें बातें करते देख तथा गुरुको शान्त होते देख उनका उन्माद और भी गढ़ गया। वे सब के सब राही की ओर भर्त्सना पूर्ण दृष्टिसे देखते हुए बड़बड़ाने लगे—नराधम ! नीच ! जगत गुरु को प्रणाम तक नहीं करता। तुझको इतना अभिमान हो गया कि इस रास्ते से चला जाता है और सब प्राणियों के हित-कर्ता, भूत भविष्य के जानने वाले ईश्वर के समीप पहुंचे हुए स्वामी महाराज की तरफ देखता तक नहीं। जानता है, अपने इस व्यवहार से तू ने उनका कितना अपमान किया ? बोल तुझे क्या दण्ड दिया जाय ?

"अगर मेरा मास खाकर तुम्हारे स्वामी जी का पेट भर सकता हो तो मुझे मार डालो। मैं समझ लूँगा कि बन में किसी हिंसक पशु से भेंट हो गई।" युवक ने कुछ उत्तेजित हो कर कहा।

चेले बोले—"ओह ! महा पातकी है। फल मूल सेवन करने वाले स्वामी महाराज को माँस खाने कहता है।

युवक—मैं पातकी नहीं हूँ, पातकी हो तुम सब। और तुमसे भी अधिक पातकी है यह जन समाज जिसने खिला खिलाकर तुमको और तुम्हारे गुरु महाराज को संसार में अधर्म फैलाने के लिए मोटा किया है ?

चेले दाँत पीस कर रह गये। बाबा जी क्षण भर पहले इन्द्रिय निग्रह आदि विषयों पर उपदेश देते हुए कह चुके थे कि उन्होंने वह सिद्धि प्राप्त करली है जिसमें पहुँच कर मनुष्य दुःख सुख, काम क्रोध, मद लोभ, मान अपमान सब भूल जाता है। कोई उन्हें गाली दे तो वे बुरा नहीं मानेंगे, कोई उन्हें सम्मान दे तो वे प्रसन्न नहीं होंगे। हर बात में उन्हें एक भाव दिखाई देता है। इसलिये अपने मुंह पर अपनी निन्दा को सुन कर भी वे चुप रह गये और अपनी बात सिद्ध करने के लिए कृत्रिम हँसी हँस कर बोले—इस मुसाफिर को छोड़ दो। मुझे कोई प्रणाम करे तो क्या और न करे तो क्या ? मुझे किसी बात की चाह नहीं। मैं इस युवक से प्रसन्न हूँ कि यह सच्चाई के साथ पेश आता है। इसमें पाखण्ड नहीं है।

यह कह कर वे युवक से बोले—आओ बेटा, बैठो।

युवक बोला—मुझे बैठने की इच्छा नहीं है पर मैं आपका बड़ा कृतज्ञ होऊंगा यदि आप अपनी इस सेना का संवरण कर लें।

बाबा जी ने कहा—जाओ खुश रहो, अच्छा।

बाबा जी का यह व्यवहार देख कर स्त्रियों में से एक ने कहा—कैसा रूखा आदमी है भाई! खुश तो नहीं होता कि इसका भाग्य लौटा जो इतने बड़े महात्मा ने पूछा। उलटा मिजाज दिखाता है।

स्त्रियों के हृदय में अपने प्रति इस ऊंचे भाव को और भी दृढ़ करने के उद्देश्य से बाबा जी अपना क्रोध दबाते हुए बोले—अभी श्राप दे दूं तो भस्म हो जाय!

युवक जो चेलों से छुटकारा पाकर आगे बढ़ने वाला था बाबा जी के ये शब्द सुन कर वहीं खड़ा रह गया और बोला—क्या अच्छा हो कि आप मुझे श्राप दे दें!

बाबा जी—क्यों?

युवक—मैं भस्म होना चाहता हूँ।

बाबा जी—तुम्हारा कोई मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ क्या बेटा?

युवक—मेरी सारी आशाओं पर पानी फिर चुका है, मैं जीवन से निराश हो चुका हूँ। मैं चाहता हूँ कि मैं मर जाऊं। इसी लिए यह सुनकर कि आप श्राप से भस्म कर सकते हैं बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

बाबा जी—इतना खेद मत करो। तुम्हारी आशा एक दिन जरूर पूर्ण होगी।

युवक—आप यह बात न कहेंगे जब आप को मालूम होगा कि मेरी सारी आशाएँ एक कुलीन विधवा की चूड़ियों की तरह तोड़ दी गई हैं।

बाबा जी—क्या तुम बतला सकते हो कि तुम्हें क्या दुःख है?

युवक—मेरा दुःख मेरी आंखों में आपको नहीं दिखाई पड़ता क्या?

बाबा जी—हाँ, कुछ कुछ तो जरूर दिखाई पड़ता है पर पूरी तरह से देखने के लिए चित्त को एकाग्र करना पड़ेगा।

युवक—मैं आपकी परीक्षा नहीं करना चाहता हूँ। इस लिए सब बताऊंगा। इस खयाल से नहीं कि आप मेरी सहायता करेंगे बल्कि इस खयाल से कि मेरा जी कुछ हलका हो जायगा।

बाबा जी—मैं भूत वर्तमान भविष्यत तीनों कालों की बातें जानता हूँ। कहो! बहुत कुछ मुमकिन है कि तुम्हारे कल्याण के उपाय बता दूं।

युवक—आपकी बातों से जान पड़ता है कि अगर मैं आपकी थोड़ी सी परीक्षा ले लूं तो आप बुरा न मानेंगे। मेरी एक प्रिय वस्तु खो गई है? बताइये वह क्या है?

बाबा जी ने इधर उधर देखा। युवक के चेहरे पर खूब गौर किया फिर एक चैन की साँस ली और बोले—अभी मैं ने चित्त को एकाग्र नहीं किया है इसलिए ठीक ठीक जवाब

नहीं दे सकता पर मेरा मन बोलता है कि आपकी वह प्रिय वस्तु एक स्त्री है।

इस उत्तर के साथ ही बाबा जी युवक को विधाता से भी बढ़कर मालूम होने लगे। वह कुछ लज्जित होकर कहने लगा—स्वामी जी भूल हो गई जो अनजाने से आप का समुचित सत्कार नहीं कर सका। वियोग से, समाज के भीषण अत्याचार से, मेरी बुद्धि बिखर गई है। मेरी समझ पर परदा पड़ गया है।

बाबा जी—ऐसी अवस्थाओं में मनुष्य को धैर्य रखना चाहिए। हरिश्चन्द्र को प्रिया वियोग हुआ था, वे राजा थे पर कर्त्तव्य के सामने वियोग को कुछ नहीं समझा।

युवक बोला—महराज जी! सब समझता हूँ पर मानों अन्धा हो गया हूँ। आप मेरी आँखों में पुनः आशा की ज्योति सञ्चार करेंगे इसका मुझे दृढ़ विश्वास है।

अब कृपा कर यह बताइए कि वह जीती है या मर गई?

इस प्रकार का उत्तर देना बाबा जी के लिये आसान होगया था, क्योंकि यह भूतकाल की नहीं; भविष्यतकाल की बात थी जिसका कोई भी उत्तर दिया जा सकता है।

बाबा जी ने मुस्कराते हुए कहा—जीती है।

युवक—कहाँ है, मुझे कब मिलेगी?

बाबा जी—तुम कहाँ से आ रहे हो?

युवक—सिरसा से।

बाबा जी—यहाँ से पूर्व दिशा की ओर है। पर एक स्थान पर न रहेगी। यही बात मिलने की। सो पूजा पाठ करोगे, साधु सन्तों की सेवा करोगे तो जब ईश्वर तुम पर प्रसन्न हो जायँगे तो मिल जायगी।

युवक के मुँह से सिरसा शब्द सुन कर वह स्त्री जिसने बाबा जी से चेलों की शिकायत की थी अपने पास बैठी हुई एक बारह वर्ष की कन्या के साथ उठ खड़ी हुई और थोड़ी दूर पर एक पेड़ की आड़ में जा बैठी। उसके साथ बाबा जी के दाहिने ओर बैठे हुए आदमियों में से एक आदमी भी वहीं पहुँचा। वहाँ उन दोनों में कुछ देर तक बातें हुईं। फिर वह आदमी वापस आकर युवक से बोला—कृपा करके उस पेड़ तक चलिये। आपसे एक आवश्यक बात पूछनी है।

युवक उठकर वहाँ चला गया। चेलों ने हाथ मलते हुए आपस में कहा—चमत्कार करने वाले कहीं के न रहे और जिस पर चमत्कार किया गया उसका भाग्य पलट गया। अब वह उस स्त्री से हँस हँस कर बातें करेगा और उस मोती के दाने को करीब से देखेगा।

युवक उस पेड़ के पास पहुँचा तो उस आदमी ने उससे पूछा—आपका नाम श्यामसुन्दर है।

युवक ने आश्चर्य्य के साथ कहा—हाँ, आपने कैसे जाना? आप कौन हैं?

आदमी--सामने तुम्हारी सास बैठी हैं। मैं इनका भाई हूं।

कन्या के वियोग से व्याकुल होकर ये नैहर चली आई हैं और बाबाजी से तुम्हारे तथा अपनी बेटीके सम्बन्धमें कुछ पूछने आई थीं कि तुम आगये। यह लड़की मेरी भानजी है। यह भी अपनी बहिन के लिए रात दिन रोती रहती है।

श्यामसुन्दर, जैसा कि अब हम उस युवक को कहेंगे, बोला—आप लोगों को उसका कुछ पता है?

घूँघट की आड़ में से श्यामसुन्दर की सास ने जवाब दिया पता होता तो यहां क्यों आती? बाबा जी की खुशामद क्यों करती, चेलों का गुण्डापन क्यों सहती?

श्यामसुन्दर—तुम यह जानती हो या नहीं कि उसके लिये मैं भी उतनाही दुखी हूँ जितनी तुम हो।

सास—जानती हूं। खूब जानती हूँ। मेरी बेटी जाते समय अपनी सहेली से तुम्हें—जो सँदेशा दे गई है उसी से मुझे मालूम हुआ कि तुम बिल्कुल निर्दोष हो।

श्यामसुन्दर—क्या सन्देशा?

सास—यही कि यदि आप मुसाफिर खाने में अपनी की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार अपनी पत्नी को लेने आवें और उसे न पावें तो भी उसकी तलाश बन्द न करें। वह आप के दर्शन की लालसा लिए इधर उधर भटकती होगी।

श्यामसुन्दर—इसके सिवाय और वह कह ही क्या सकती थी? लेकिन जान पड़ता है कि उसे ढूंढने के लिए दूसरे लोक में जाना पड़ेगा।

सास ने आँखों में जल भर कर कहा--वह कहाँ गई होगी? क्या खाती होगी? अपनी इस बहिन से वह बहुत सयानी है पर इसके बराबर भी उसको संसार का ज्ञान नहीं है। बेटा! उसका कुछ पता चलता है?

श्यामसुन्दर—मिर्जापुर में गङ्गा में कूदने का और बहते बहते पूर्व की तरफ जाने का समाचार मिलता है। यह रात की बात थी। दिन होता तो लोग देखते भी। मिर्जापुर से यहाँ तक गङ्गाका किनारा छानडाला कहीं कुछ पता नहीं लगता। मालुम हुआ कि आगे के गांव में उसका ननिहाल है। वहीं पता लगाने जा रहा था कि मेरी यह दुर्दशा हुई। जान पड़ता है मेरे भाग्य में अभी बहुत दुःख भोगना लिखा है।

सास—बेटा, अब उसे मरी समझो। अब वह न मिलेगी। उसे तैरना बिल्कुल न आता था। और गङ्गा में कूदी है तो मरने के लिए ही कूदी होगी। रामनगर में ही वह कुएँ में कूद पड़ी थी पर वहाँ तो लोगों ने उसे बचा लिया। गङ्गा में उसे बचाने वाला कोई न था।

श्यामसुन्दर ने एक दुःख की साँस ली। सास फिर बोली—तुमको देखकर मेरा आधा क्लेश कट गया। बेटा। तुम देवता हो। मेरी एक बात मानोगे? कहूं?

श्यामसुन्दर—कहो, क्यों न मानूंगा।

सास—मेरी यह बेटी देखने में बिल्कुल उसी की तरह है।

श्यामसुन्दर ने उस कन्या की ओर देखा। ऐसा जान पड़ा मानों चन्द्रकला ही अपने खोए हुए बचपन को लेकर खड़ी है। वही आखें हैं। वही चितवन है। आंखों में वही आंसू हैं।

सास ने फिर कहना शुरू किया—इसकी बाँह पकड़ लो तो इसका भी बेड़ा पार होजाय, तुम्हारा भी दुःख कम होजाय और मैं भी समझूंगी कि मेरी दोनों बेटियाँ एक शरीर धारण करके अपने प्यारे स्वामी के साथ सुखी हैं।

मां की बातें सुनकर बेटी लजा गई और अपने मामा के पीछे जाकर खड़ी हो गई।

श्यामसुन्दर ने कहा—बेड़ा जरूर पार हो जायगा। वह गङ्गा में कूदी है, इसे समुद्र में कूदना पड़ेगा। इतने पर भी तुम्हारी समझ में नहीं आया कि मैं नालायक हूं। मेरे न वर है न द्वार। मैं किसी स्त्री का पति होकर सिवाय इसके कि उसको पथ की भिखारिणी बना दूं और क्या कर सकता हूँ। तुम्हें इस लड़की पर दया नहीं आती जो इस तरह की अशुभ बात कहती हो। मेरे साथ ब्याह न किया होता तो तुम्हारी बड़ी बेटी शायद कहीं रानी सी बैठी होती।

सास—तुम्हारा दूसरा ब्याह तो होगा ही।

श्यामसुन्दर—मेरे होश में नहीं होगा। मैं मर जाऊंगा तो होगा।

सास—ऐसी बात मत कहो बेटा। मुझे सुन कर दुःख होता है।

श्यामसुन्दर—तुम्हें दुःख होता है तो नहीं कहूंगा।

सास—चलो, कुछ दिन मेरे नैहर में रहो। वहां तुम्हारा चित्त शान्त हो जायगा और तुम अपने भविष्य के सम्बन्ध में अच्छी तरह विचार कर सकोगे। तुमको देखकर मेरा भी घाव भरेगा।

श्यामसुन्दर—नहीं, अभी मैं बनारस तक जाऊंगा। मुमकिन है कि वहाँ उसकी लाश को किसी ने देखा हो या पूर्ण रूप से मरी न हो और उसे किसी ने बचा लिया हो।

सास में इसका विरोध करने का बल नहीं था। वह अपने गले से मोतियों की एक माला उतार कर श्यामसुन्दर को विदाई के स्वरूप देने लगी।

श्यामसुन्दर ने जवाब दिया—अब मैं फकीर हूँ, फकीर को इन चीज़ों से क्या मतलब?

सास—नहीं बेटा यह बड़ा काम देगी। मेरी बेटी को पाजाओगे तो तुम्हें तुरन्त चार पैसों की जरूरत पड़ेगी। मैं देखती हूं कि तुम्हारे पास कुछ नहीं है। उस समय यह माला तुम्हारी सहायक होगी। इससे तुम्हें कई हजार रुपये मिल जायँगे।

श्यामसुन्दर ने कुछ सोच समझ कर माला लेली। अब उसे जहाँ जो रहा था वहाँ जाने की जरूरत न थी। वह करीब के रेलवे स्टेशन की तरफ लपका और ये माँ बेटी अश्रुपूर्ण नेत्रों से टकटकी बाँध कर उसे देखती रहीं। श्यामसुन्दर के मामा ने चिल्लाकर कहा— यदि हम लोगों की मदद की जरूरत पड़े तो फौरन खबर देना। सङ्कोच मत करना।

श्यामसुन्दर ने पीछे लौटकर देखा और कहा— "बहुत अच्छा।"

उसे जान पड़ा मानों उसकी विपत्ति का अन्त हो गया। मानों विधाता अब उसे और कष्ट नहीं देंगे। उसके पाँव जल्दी जल्दी आगे बढ़ने लगे।

दशवां परिच्छेद

सधवा और विधवा

हम किसी पिछले परिच्छेद में लिख आए हैं कि चन्द्रकला पढ़ी लिखी नहीं है पर उससे पाठकों को यह न समझ लेना चाहिये कि वह बिल्कुल गंवार है। रामनगर में प्रति वर्ष रामलीला देखने से रामायण की कथा का उसे अच्छा ज्ञान होगया है। सीता का चरित्र उसे बहुत पसन्द है। इसी एक चरित्र से उसने समझ लिया है कि पातिव्रत धर्म क्या है और उसका कैसे पालन करना चाहिए। जो धार्मिक भाव स्त्रियों में सैकड़ों धर्म ग्रन्थ पढ़ने पर भी नहीं प्रगट होते वही चन्द्रकला में केवल रामलीला देखने से जाग्रत हो गये हैं। रामलीला में राम जानकी का, लक्ष्मण परशुराम का, कैकेयी दशरथ का, संवाद आदि सुनते सुनते वह बात चीत की कला में बहुत निपुण हो गई है। उसके जीवन में रामायण इस तरह समागई है कि यदि किसी रामलीला मण्डली में उसे सीता बनना पड़े तो बिना किसी तयारी के वह सबसे अच्छा अभिनय दिखा सकती है। यही कारण है कि जब वह बात चीत करती है तो लोग उसे किसी विद्वान से कम नहीं समझते।

जब शरीर स्वस्थ रहता है तो हृदयके विचारों को बड़ा बल मिलता है। चन्द्रकला कभी बीमार नहीं पड़ी। उसके शरीर में कभी आलस्य नहीं आया, वह सदैव सूर्य्योदय से पहले उठती रही है। इन सब कारणों से चन्द्रकला अपनी आयु के लड़कों से भी अधिक तन्दुरुस्त और फुर्तीली देखी गई है। नई रोशनी उस तक नहीं पहुँची, नयी सभ्यता की छाया उस पर नहीं पड़ी, पर यह खयाल कि स्त्रियों को भी पुरुषों के समान ही अपने शत्रुओं का मुकाबला करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए न जाने कैसे लड़कपन से ही उसके दिल में जम गया। लोग कहते हैं ईश्वर को जिस प्राणी से जैसा काम करवाना होता है उसमें शुरू सेही वह वैसे विचार उत्पन्न कर देता है। सम्भव है चन्द्रकला की रचना भी इसी विधि-विधान के अनुसार हुई हो।

शरीर की सुन्दरता, आरोग्यता और यौवन पर जितनी निर्भर है उतनी और किसी बात पर नहीं। केवल इन्हीं दो बातों से चन्द्रकला को परम सुन्दरी कहने में किसी को इनकार न होगा। पर विधि ने उसमें स्वाभाविक सौंदर्य्य भी भरा है। उसका गोरा और सुडौल शरीर, कमर तक लटकते काले केश, कोमल भुजाएँ, बड़ी बड़ी आँखे, गोल कपोल, लाल लाल होंठ, सीधी और सरल चितवन, मोती से निखरे दाँत देख कर कवि कल्पना के सागर में गोते लगाने लगेगा और शायद गुनगुनाने भी लगे कि —

लखिकै दृग मीन छिपे वन में,
मन में अरविन्द सकाने रहैं।
बड़ी बेनी भुजंगिनि देखि झखैं,
कटि केहरि चाहि लजाने रहैं॥
उरु सौंह उरोजनि देखि 'विजय',
मन देवन के ललचाने रहैं।
मुख चन्द की पेखि प्रभा दिल में,
दिन में चकवा चकवाने रहैं॥

ऐसी सर्वाङ्ग सुन्दरी और सर्वगुण सम्पन्ना चन्द्रकला को अधिकार में पाकर पंडित सुधानिधि शास्त्री मानों स्वर्ग की अप्सरा पा गये। क्या उपाय हो कि चन्द्रकला हँस हँस कर उनसे बातें करे और अपने आपको उनकी पशु प्रवृत्तियों का खिलौना बनादे, केवल यही सोचने के लिए वे रात रात भर जगने लगे। विधवा पुत्री और चरणों की दासी पत्नी उनके इस काम में विशेष बाधक प्रतीत हुईं। क्योंकि चन्द्रकला बहुधा उन्हीं के पास रहती है जिससे शास्त्री जी को उसके साथ एकान्त नहीं मिलता। शास्त्री जी सोचने लगे—ऐसी स्त्री मर जाती और ऐसी बेटी खसम करके कहीं निकल जाती तो अच्छा होता। मैं घर के काम के लिए एक नौकरानी रख लेता और धर्मसभा में नाक कटवा लेता। इन दोनों ने मेरे रास्ते में जो अड़चन उपस्थित की है वह अब सही नहीं जाती।

प्रकाश रूप से तो शास्त्री जी कुछ न कहते पर मन ही मन पत्नी और बेटी पर कुढ़ते रहते। उनका यह व्यवहार पत्नी पर प्रगट हो चुका था पर बेचारी करती क्या? उसके पास कोई उपाय नहीं था। चन्द्रकला उसको अम्मा अम्मा कह कर पुकारती थी तो वह बेटी कह कर उसे अपने पास कैसे न रखती? शास्त्री जी की पुत्री में और चन्द्रकला में तो अगाध स्नेह होगया था।

और उपाय न देखकर एक दिन शास्त्री जी ने अपनी पत्नी को एकान्त में लेजाकर कहा—उस लड़की से तुम्हें बहुत बोलने की जरूरत नहीं है।

"वह बोलती है तो क्यों न बोलूं?"

"वेश्या तुमसे बोले तो उससे बोलोगी?"

"वह वेश्या नहीं है।"

"तुम क्या जानो कि वेश्या नहीं है।

"वेश्या है तो उसे घर से निकाल दो।"

"मैं तो उसे बाहर के हिस्से में रखना चाहता हूँ जहाँ से वह तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकती।"

"तो तुम उसे मने कर दो कि मेरे पास न आए।"

"यह तुम्हारा काम है।"

"नहीं मेरा काम नहीं है। जिसे पति इतने आदर से रखता है उसका तिरस्कार करना मेरा काम नहीं है।"

"तुम चाहती हो उसे आदर से न रखूं।"

"मेरे चाहने न चाहने से क्या?"

"मैं यह नहीं सुनना चाहता। 'हाँ' या 'नहीं' में जवाब दो।"

"तो तुम क्या चाहते हो कि मैं उससे न बोलूँ।"

"हाँ।"

"क्यों?"

"क्योंकि उसके चरित्र में मुझे सन्देह है।"

"चरित्र में सन्देह है तो घर में क्यों रखते हो?"

"इस मसले को तुम नहीं समझ सकती हो।"

"अच्छा तो मैं उससे क्या कहूँ।"

"उसके साथ ऐसा बर्ताव करो कि वह तुमसे घृणा करने लगे।"

"मुझसे घृणा करने वाली से तुम हँस हँस के बातें करोगे यह मैं कैसे देख सकूँगी।"

"नहीं देख सकोगी तो जाओ भाड़ में।"

शास्त्री जी झल्लाए हुए बाहर चले गये। बेचारी पत्नी समझ न सकी कि उसका क्या दोष है? उस पर पति इतना क्रोध क्यों करते हैं।

इस घटना के दो तीन दिन बाद शास्त्री जी ने चन्द्रकला को अपने पास बुला कर कहा—तुम्हारी भलाई के लिए तुमसे अगर कुछ पूछूँ तो बताओगी?

"हाँ !" चन्द्रकला ने सिर नीचा करके कहा।

शास्त्री जी—तुम अपना फिरसे विवाह करोगी ?

चन्द्रकला—नहीं।

शास्त्री जी—जवानी दीवानी होती है। मालूम है ? अभी ज़रा और सयानी होओगी तो तुमसे रहा न जायगा।

चन्द्रकला—जब रहा न जायगा तो देखा जायगा।

शास्त्री जी—देखा क्या जायगा, उमर ज्यादा हो जाने से तब तुम्हें कोई पूछेगा नहीं।

चन्द्रकला—मैं तो चाहती हूँ कि मुझे कोई कभी न पूछे।

शास्त्री जी—काम को जीतना बड़ा कठिन है।

चन्द्रकला—लज्जा से सिकुड़ गई। इस विषय पर एक पुरुष से बातें करने लिये वह तयार न थी।

शास्त्री जी—मैं विलायत गया था। वहाँ मैंने देखा है कि साहबों की लड़कियाँ बूढ़ी हो जाती हैं और ब्याह नहीं करतीं। पर इस बात को सब जानते हैं कि उनका चरित्र अच्छा नहीं होता। वे बड़ी व्यभिचारिणी होती हैं।

चन्द्रकला—होती होंगी। मैं विलायत में नहीं हूँ। हिन्दूस्तान में हूँ।

शास्त्री जी—हिन्स्दुतान में होने से क्या तुम्हें काम न सतावेगा ?

चन्द्रकला फिर लजा गई। इस बार क्रोध भी हुआ उसे

कुछ उसने कहा—मैं ऐसी बातें नहीं सुनना चाहती ? आप मुझे क्षमा करें।

शास्त्री जी—मैं खुद ऐसी बातें नहीं कहना चाहता। केवल तुम्हारी भलाई का खयाल करके इस तरह बेशरम हो रहा हूँ। तुम्हीं बताओ कैसे बीतेगी ?

चन्द्रकला—आप ही न उस दिन कहते थे कि हिन्दुस्तान में लाखों ऐसी विधवाएं हैं जिन्होंने पति का मुंह नहीं देखा जैसे उनका बीतेगी वैसे ही मेरा भी बीतेगी।

शास्त्री जी—विधवाओं का हाल तुम्हें मालूम है। सब देश को चोपट कर रही हैं। छिपे छिपे व्यभिचार बढ़ा रही हैं, सैकड़ों गर्भ प्रति दिन गिराये जाते हैं।

चन्द्रकला—आप की पुत्री भी तो विधवा है। जैसे उसके दिन बीतेंगे वैसे ही मेरे भी बीतेंगे।

शास्त्री जी—मेरी पुत्री को कितनी तपस्या करनी पड़ती है ? कितनी देख रेख में उसे रहना पड़ता है ? फिर भी मुझे डर लगा है कि कहीं किसी के साथ काला मुंह करके वह मेरी नाक न कटा ले।

चन्द्रकला—डर लगा है तो उसका ब्याह क्यों नहीं करते ?

शस्त्री जी—विधवा विवाह शास्त्र के विरुद्ध है।

चन्द्रकला—विधवा विवाह शास्त्र के विरुद्ध है तो मेरा ब्याह कैसे हो सकता है ? मेरे तो स्वामी भी मौजूद हैं।

शास्त्री जी—तुम कलङ्किनी हो घर से निकाल दी गई हो तुम्हारे सामने दो ही मार्ग हैं। या तो किसी नए विचार वाले से व्याह कर लो या वेश्या हो जाओ।

चन्द्रकला—तीसरा मार्ग भी है।

शास्त्री जी—क्या ?

चन्द्रकला—आत्महत्या।

शास्त्री जी—तुम्हारा यह यौवन और सौंदर्य्य जिस लिए विधाता ने बनाया है बिना उसकी पूर्ति हुए तुम आत्महत्या नहीं कर सकोगी।

चन्द्रकला—यह यौवन और सौंदर्य्य तो आपकी पुत्री में भी है।

शास्त्री जी—वह तपस्या की अग्नि में इनकी आहुति दे रही है।

चन्द्रकला—मैं भी ऐसा ही करूंगी

शास्त्री जी—तुमको अधिकार नहीं है।

चन्द्रकला—अधिकार हो या नहीं मैं तपस्या करूंगी।

शास्त्री जी—जो अनधिकार कोई काम करता है वह नाश को प्राप्त होता है।

चन्द्रकला—तब तो यह नुसखा मेरे लिए और भी हितकर है।

शास्त्री जी—तुम ऐसी जगह आगई हो जहाँ जीवन का सर्वोत्तम सुख लूट सकती हो।।

चन्द्रकला—ऐसी जगह में मैं आग लगाती हूँ।

शास्त्री जी—और तुम्हारी इन बातों से मेरे हृदय में आग लगती है। बड़े अफसोस की बात है कि तुम्हें अपने हित अहित का जरा भी खयाल नहीं है।

चन्द्रकला—आप मेरे लिए व्यर्थ परेशान क्यों होते हैं ? जो मेरे भाग्य में लिखा होगा, होगा ! आपको मैंने बहुत कष्ट दिया। अब आप मुझे यहां से जाने की आज्ञा दें।

शास्त्री जी—कहाँ जाओगी ?

चन्द्रकला—जहां मेरे जी में आएगा।

शास्त्री जी—देखो मैं फिर कहता हूं। मेरी बात मान जाओ।

चन्द्रकला—मैं हाथ जोड़ती हूं। मुझे जाने दो।

"जाने वाले को कौन रोक सका है।" कहते हुए शास्त्री जी ने एक बनावटी तिरस्कार की दृष्टि से चन्द्रकला की ओर देखा और घर से बाहर हो गये।

शास्त्री जी के चले जाने पर चन्द्रकला उठ कर उस स्थान पर आई जहाँ शास्त्री जी की पत्नी और पुत्री बैठी थीं। उनसे रो रो कर चन्द्रकला ने कहा—बताओ मैं क्या करूं ?

"पिता जी क्या करने कहते हैं ?" पुत्री बोली।

"कहते हैं व्याह कर लो।"

मां बेटी दोनों चुप हो रहीं। देर हो रही थी इसलिए मा

खाना बनाने चली गई। चन्द्रकला में और शास्त्री जी की पुत्री में इस प्रकार बातें होने लगीं।

चन्द्रकला—बहिन ऐसा क्यों कहते हैं ?

पुत्री—क्या मालूम ?

चन्द्रकला—कभी तुमसे भी कहते हैं ?

"मुझसे कहें तो मैं तयार हो जाऊँ। नहीं नहीं, योंही कह रही हूँ।" कह कर शास्त्री जी की मलिन-वसना कन्या ने चन्द्रकला की गोद में अपना मुंह छिपा लिया। चन्द्रकला ने उसकी पीठ पर हाथ रखा और आंखों में अश्रु भर कर कहा—"तुमने अपने स्वामी को देखा है।"

"नहीं सुनती हूँ कि वे बड़े सुन्दर थे। जैसे रहे होंगे जैसे रहे होंगे। स्वामी नहीं थे दुश्मन थे। उन्हीं के कारण आज मैं एक कैदी से भी गई गुजरी हालत में हूँ।" शास्त्री जी की पुत्री ने मुंह छिपाये ही छिपाये कहा।

चन्द्रकला—"मैंने तो अपने स्वामी को देखा है।"

पुत्री—कैसे हैं ?

चन्द्रकला—बड़े सुन्दर, बड़े सीधे, बड़े अच्छे, बड़े दयावान।

पुत्री—तो तुम्हें उन्होंने छोड़ क्यों दिया।

चन्द्रकला—मुझे संसार ने छोड़ दिया है पर उन्होंने नहीं छोड़ा। वे मुझे खोजते होंगे। ठीक वैसेही जैसे राम सीता को खोजते थे।

पुत्री—गनीमत है। तुम्हें एक खोजने वाले मौजूद हैं। पर जान पड़ता है मृत्यु के सिवाय मेरी खोज और कोई न करेगा।

यह बातें सुनकर चन्द्रकला को अपना दुःख भूल गया। उसने कहा—"बहिन धैर्य्य रखो। ईश्वर पर भरोसा रक्खो। जिसने यह दुख दिया है वही तुम्हें एक रोज सुख भी दिखायेगा।"

"सुख और मैं ? यह कभी सम्भव हो सकता है ?" शास्त्री जी की पुत्री ने कहा।

चन्द्रकला—"क्या तुम सचमुच अपना ब्याह करना चाहोगी।"

"नहीं, ब्याह की मुझे इच्छा नहीं है। पर इस बन्दी गृह से निकलने के लिये, अगर मुझे ब्याह करना पड़े, दोनों कुलों की नाक कटानी पड़े, यह लोक और परलोक बिगाड़ना पड़े तो भी कहूंगी कि हां मुझे सब स्वीकार है।"

चन्द्रकला रोने लगी। शास्त्री जी की कन्या भी रो उठी।

यह रुदन सुनकर शास्त्री जी की पत्नी रसोई घर से बाहर आई और बोली—"मैं समझती थी कि विधवाओं का ही जीवन दुखी है। पर अब देखती हूँ कि विधवापन और सधवापन में विशेष अन्तर नहीं है। बेटी! चुप रह! सुहाग बना होता तब भी तुझे सुख न मिलता।"

ग्यारहवां परिच्छेद

——:o:——

न भयं न लज्जा

"चन्द्रकला, लो! तुम्हारे नाम एक चिट्ठी है।"

"एं! मेरी चिट्ठी? कहाँ से आई?"

"यह तो पढ़ने के बाद मालूम होगा।"

"मुझे पढ़ना नहीं आता, आप पढ़ कर सुना दें।"

"बातें तो तुम पढ़ों लिखों की सी करती हो और कहती हो मुझे पढ़ना नहीं आता।"

"सचमुच मुझे पढ़ना नहीं आता?"

"मैं इस चिट्ठी को पढ़कर कैसे सुनाऊं। यह किसी ऐसे आदमी की जान पड़ती है जो तुम्हें प्यार करता है?"

चन्द्रकला ने समझा शायद उसके स्वामी ने उसका पता पा लिया है। सम्भव है वे उसे लेने आते हों। उन्होंने यह चिट्ठी लिखी होगी। उनके सिवाय और कौन उसे चिट्ठी लिखेगा? वह उत्सुकता के साथ बोली—"अच्छा तो दे दीजिए, बहिन से पढ़वा लूंगी।"

"नहीं यह चिट्ठी तुम्हारी बहिन के पढ़ने लायक नहीं है। इसमें प्यार की बातें हैं। बेचारी बिधवा मन मसोस कर रह जायगी।"

पंडित सुधानिधि शास्त्री की इस बात से चन्द्रकला को विश्वास होगया कि हो न हो यह चिट्ठी उसके स्वामी ने ही लिखी है। आशा से उसकी आँखें चमक उठीं। दौड़कर वह शास्त्री जी के बहुत निकट आ गई। शास्त्री जी का हृदय धड़क उठा। उन्होंने चाहा कि इस मुग्धा बाला को अपने बाहु पाश में बड़े जोर से बाँध लें पर न जाने क्यों उनके हाथ आगे न बढ़ सके। उनके शरीर में रोमाञ्च हो आया। उनकी यह दशा उनके चेहरे पर साफ अङ्कित हो रही थी। भोली चन्द्रकला इसे समझ न सकी। प्रियतम का हाल जानने की उत्कण्ठा इस कदर बढ़ी कि वह अपनी लज्जा को रोक न सकी। उल्लसित कण्ठ से वह बोली—जल्दी से बता दीजिए क्या लिखा है? रहा नहीं जाता। कलेजा बाहर निकला आता है।

शास्त्री जी—तुम्हारे मन की बात हो तो क्या दोगी?

चन्द्रकला—जो माँगोगे दूं।।

शास्त्री जी—नहीं दोगी।

चन्द्रकला—मेरा आप सिर माँगे तो भी अभी काट कर दे सकती हूं। जल्दी पढ़िये क्या लिखा है।

शास्त्री जी—अच्छा सुनो।

शास्त्री जी ने इस प्रकार पढ़ना शुरू किया—

"प्यारी चन्द्रकले,

जब से मैं ने तुम्हें देखा है तभी से मैं तुम्हारे प्रेम में पागल हो गया हूँ। तुम्हारी चितवन मेरे हृदय में ऐसी समा

गई है कि लाख यत्न करने पर भी निकाले नहीं निकलती। रात दिन, सोते जागते, उठते बैठते, यही इच्छा रहती है कि किसी एकान्त स्थान में तुमको पाऊं और तुमको भेंट कर अपने हृदय की ज्वाला को शीतल करूं। तुम नहीं जानती हो कि मैं तुम्हारे लिये कितना छटपटा रहा हूं। प्यारी क्या मुझपर दया करोगी?

— तुम्हारे रूप का प्यासा

चन्द्रकला इस चिट्ठी का कुछ अर्थ न समझ सकी। हां, यह उसने निश्चय कर लिया कि यह चिट्ठी उसके स्वामी की नहीं हो सकती। क्योंकि स्वामी उससे दया की भिक्षा क्यों मांगेंगे? वे तो उस पर दया करने वाले हैं। आश्चर्य्य भरी दृष्टि से उसने अपना सिर ऊपर उठाया। शास्त्री जी सामने ही खड़े थे। चन्द्रकला के ऊपर उठे हुए सिर को उन्होंने अपने दोनों हाथों से पकड़ कर उसके गुलाबी होठों पर अपने पानसे काले हुए होठों को रख दिया। चन्द्रकला झिझकी और बाहर जाने का प्रयत्न करने लगी। शास्त्री जी ने उसे और भी मजबूती से पकड़ कर कहा—प्यारी डरो मत! इस समय घर में कोई नहीं है।

अब चन्द्रकला को मालूम हो गया कि इस चिट्ठी का क्या अर्थ है। बल पूर्वक अपने आपको शास्त्री जी के निर्दय हाथों से छुड़ा कर भयभीता मृगी के समान वह थोड़े फासले पर खड़ी होकर बोली—मुझे तुमने बेटी कह कर पुकारा था। बेटी

के साथ यही बर्ताव करना होता है? तुम्हें देवता समझने वाला संसार कितने धोखे में है? शास्त्री जी तुम पिशाच हो। हटो मुझको जाने दो।

"कहां जाओगी?"

"माँ बहिन के पास। उनसे तुम्हारी इस नीचता का हाल कहकर अपना रास्ता लूंगी।"

शास्त्री जी—वे दोनों घर में नहीं हैं।

चन्द्रकला—कहां गई हैं?

शास्त्री जी—विश्वनाथ जी का दर्शन करने।

चन्द्रकला—कब आएँगी।

शास्त्री जी—एक घण्टे में।

चन्द्रकला—बिना मुझे बताए वे क्यों गईं?

शास्त्री जी—मैंने उनसे कह दिया कि मेरे ऊपर छिपकली कूद पड़ी है दोनों अभी जाओ और गङ्गा स्नान करके विश्वनाथजी को जल चढ़ाओ। नहीं तो न जाने क्या अनर्थ होजायगा। दोनों बड़ी बेवकूफ हैं। उसी दम चली गईं।

चन्द्रकला—इस प्रकार तुमने उन्हें क्यों भेजा?

शास्त्री जी—तुमसे एकान्त में मिलकर बातें करने के लिए, तुम्हें अपने हृदय से लगाने के लिए, तुम्हारा रूप रस पीने के लिए, तुम्हारे इस यौवन की मदिरा का स्वाद लेने के लिए।

चन्द्रकला—इसीलिये मुझे बेटी बनाकर इस घर में रक्खा था।

शास्त्री जी—इसमें केवल मुझी को सुख नहीं है तुमको भी संसार का अमृत मिलेगा।

चन्द्रकला—मुझे अमृत की जरूरत नहीं है।

शास्त्री जी—अभी तुमने चखा ही कहाँ? एक बार स्वाद पा जाने पर फिर इस प्रकार बातें न करोगी।

चन्द्रकला—नर्क में जाओगे, कोढ़ी हो जाओगे!

शास्त्री जी—स्वर्ग नर्क कुछ नहीं है। सब ढकोसला है। सच पूछो तो यौवन का उन्माद लेकर स्त्री पुरुषों का मिलना ही स्वर्ग है। बाकी सब नर्क।

चन्द्रकला—पिता स्वरूप शास्त्री जी तुम तो पंडित हो।

शास्त्री जी—पर तुम्हें पंडित की कद्र करनी नहीं आती। अभी तुमने कहा था कि जो माँगोगे दूँगी। अब टालमटोल करती हो।

चन्द्रकला—हाँ मैंने कहा था। पर मैंने इस खयाल से कहा था कि तुम मुझसे वह चीज माँगोगे जो एक पिता को अपनी बेटी से माँगनी चाहिये।

शास्त्री जी—सिवाय प्रेम के और मैं क्या माँग रहा हूँ।

चन्द्रकला—तुम मुझसे वही प्रेम माँग रहे हो जो रावण ने जानकी जी से माँगा था।

शास्त्री जी—तुम्हारी यही बात ठीक मान ली जाय तो?

चन्द्रकला—तो यह भी तुम्हें मानना पड़ेगा कि रावण

सीता माता का कुछ बिगाड़ नहीं सका और राम के हाथों मारा गया।

शास्त्री जी—तुम्हारा राम और रावण दोनों मैं ही हूँ।

चन्द्रकला—तो अपने हाथों से अपना सिर पीटो।

शास्त्री जी—स्वीकार है। पर इस बात को ठीक ठीक कर दिखाने के लिए यह आवश्यक है एक हाथ से अपना सिर पीटूँ और दूसरे से तुम्हारा आलिङ्गन करूं! आओ!

यह कहते हुए शास्त्री जी चन्द्रकला की तरफ बढ़े चन्द्रकला और पीछे को खिसकती हुई बोली—खबरदार मेरे पास न आना नहीं तो अच्छा न होगा।

चन्द्रकला तेजी के साथ कमरे के बाहर निकल गई और दालान से होती हुई आँगन के उस भाग में पहुँची जहाँ हरी घास का फर्श बिछा था। शास्त्री जी ने उसका पीछा किया। अब न उनमें लज्जा थी, न भय। उनकी लेखनी पर मुग्ध संसार उनके व्यक्तिगत जीवन की इस गन्दगी और पिशाचपन पर कभी ध्यान देगा तो भी शायद उनका आदर ही करेगा। पर एक अपढ़ बाला की दृष्टि में अब उनमें और एक मुसलमान गुण्डे में कोई अन्तर नहीं रहा। चन्द्रकला बोली—तुमसे तो वह मुसलमान अच्छा था जिसने मुझे गङ्गा में आत्म विसर्जन करने का अवसर दिया। तुम व्यर्थ पंडित बने हो! तुमसे धर्म की रक्षा नहीं हो सकती। भगवान करे तुम अन्धे हो जाओ। मर जाओ!"

"तुम्हारे रूप की मदिरा ने मुझे अन्धा तो बना ही दिया है और तुमको न पाऊंगा तो मरना तो निश्चित ही है।" कहते हुए शास्त्री जी ने बाज के समान उस पर टूट कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। और उसके दोनों हाथ अपने दोनों पैरों के बीच में दबा कर उसके कोमल शरीर पर निर्दयता पूर्वक बैठ-कर उससे कहने लगे--बोलो अब क्या कर सकती हो ?

चन्द्रकला काँटों में फँसी हुई मछली के समान छुटकारे की चेष्टा करती हुई चिल्लाकर बोली--शास्त्री जी, अभी मेरी अँगुलियों में नाखून बाकी हैं। मेरे मुँह में पैने दाँतों की तेज़ कतार है। ये तुम्हें नोच डालेंगे। तुम्हें अपना पूज्य, गुरु और सहायक मानकर अब तक चुप थी। पर अब शत्रु के समान तुम्हें अपने ऊपर देखकर धैर्य्य छूटा जाता है। मुझे छोड़ दो! पापी! हत्यारे! सावधान! नहीं तो जब तक जिओगे तब तक पछताओगे।

शास्त्री जी ने बार बार उस असहाय अबला का बल पूर्वक मुख चुम्बन करने की चेष्टा करते हुए कहा—कुछ परवा नहीं।

संध्या निकट थी, ऐसा जान पड़ा मानों यह लज्जा जनक दृश्य देखकर सूर्य्य भगवान ने समय से पहले ही अपनी आँख बन्द कर ली, हवा ने साँस खींच ली और चारों तरफ सन्नाटा छा गया।

बारहवां परिच्छेद

किसमत तो ज़रा देखिये टूटी कहां व मंद,
दो चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया।

काशी में प्रातःकाल का समय बड़ा ही सुहावना होता है। उषा सुन्दरी जब गङ्गा के स्वच्छ जल में अपनी अरुण आभा के रूप में डुबकी लगाती है तभी से जय गङ्गे और हर हर, महादेव का शब्द सुनाई पड़ने लगता है। दिन निकलते निकलते गङ्गा का किनारा एक सिरे से दूसरे सिरे तक स्नान प्रेमियों से भर जाता है। नावें छप छप करती इधर उधर नाचने लगती हैं। हवन चन्दन और पुष्पों की महक से दिशाएँ जग उठती हैं और ऐसा जान पड़ने लगता है मानों संसार की पवित्रता काशी में आकर केन्द्रीभूत होगई है।

श्यामसुन्दर विश्वनाथ घाट पर खड़ा होकर कुछ देर तक यह दृश्य देखता रहा और अपनी व्यथा को भुलाने की व्यर्थ चेष्टा करता रहा। पर "मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की" के अनुसार वह और भी अधीर हो उठा। थोड़ी ही दूर पर एक नव दम्पति अनुराग भरी चितवन से एक दूसरे की ओर देखते हुए स्नान कर रहे थे। "वे जन धन्य हैं जिन्हें अपनी प्रियत-

माओं के साथ इस प्रकार जल केलि का सौभाग्य प्राप्त है" श्यामसुन्दर की आँखें यही कहती हुई निराशा का चश्मा चढ़ा कर चन्द्रकला की तलाश करने लगीं। पर उसे कहीं कुछ दिखाई न पड़ा। प्रकृति को श्यामसुन्दर की व्यथा पर विचार करने का मौका न था। वह अपने प्रातः-कालीन मङ्गल गायन, में मग्न थी। कितनी ही स्त्रियाँ आईं और सलज्ज नेत्रों से उसकी ओर देखती हुई स्नान करके चली गईं और उसे चन्द्रकला की उस चितवन की याद दिला गईं जो उसने मिर्जापुर के मुसाफिर खाने में देखी थी। पास ही एक श्वेत वसना विधवा युवती गङ्गा की ओर नत मस्तक किये हाथ जोड़े थी। उसका भी मानों इस संसार में सिवाय गङ्गा के और कोई नहीं रहा है। इसी प्रकार उनकी चन्द्रकला भी कहीं अरक्षित बैठी होगी। इस प्रकार सोचते सोचते वे बैठ गये और उनके मुँह से अनायास यह करुण संगीत फूट पड़ा

व्यर्थ चाह है नहीं पूर्ति का,
जग में कुछ जिसके साधन।
कर चकोर शशि का सकता है,
कभी न शायद आलिङ्गन॥
अभिलाषाएँ निराधार क्यों,
ऐसी उठती हैं मन में।
अन्धा कैसे लख सकता है,
अपनी आँखें दर्पन में॥

"वाह क्या खूब कहा— !" कहकर दो तीन मनचले स्नानार्थी कुछ और भी सुनने की इच्छा से उसकी प्रशंसा के पुल बाँधने लगे। नतीजा यह हुआ कि जो वे सुन सकते थे उससे भी वञ्चित होगये। श्यामसुन्दर मानों सोते से जगा। वह उठकर पूर्व की ओर चल पड़ा। उसे इस समय प्रशंसा की इच्छा न थी। वह अपनी हृदयेश्वरी की तलाश में था।

पर वे मन चले स्नानार्थी उसे कब छोड़ने लगे। आपस में यह तय करके कि यह आदमी कोई कवि है, इससे परिचय प्राप्त करना चाहिये, वे दौड़ कर श्यामसुन्दर के सामने जा खड़े हुए और हाथ जोड़ कर बोले - "श्रीमान जी हमारी बातों से रूठ गये क्या ?"

"नहीं मैं अपनी ही चिन्ता में डूबा जा रहा हूँ।" कहते हुए श्यामसुन्दर फिर आगे बढ़ने का भाव प्रगट करने लगा।

एक बोला—क्या आप कृपा करके बतायेंगे कि आपको क्या चिन्ता है सम्भव है। हम लोग आपकी कुछ सेवा कर सकें।

श्यामसुन्दर—मृत्यु के सिवाय मुझे और कोई इस विपत्ति से छुड़ा नहीं सकता।

दूसरा—सो तो ठीक है, परमितशक्ति का मनुष्य किसी का दुःख दूर करने में सदैव समर्थ नहीं हो सकता लेकिन परमेश्वर तो सब जगह है। वह सब की सुनता है। असम्भव को सम्भव कर सकता है। हम सब स्वयं कुछ न कर सकेंगे तो उससे प्रार्थना करेंगे के वह आपकी चिन्ताओं को दूर करे।

श्यामसुन्दर—मेरी पत्नी अपनी समाज से और मानव पशुओं से सताई जाने के कारण गङ्गा में कूद पड़ी है। वह बहकर मिर्जापुर से इसी ओर रातो रात आई होगी। मिर्जापुर से यहाँ तक गङ्गा के किनारे किनारे तमाम पूछा कहीं कुछ पता नहीं चलता। अब आप लोग मेरी क्या सहायता करेंगे? और आपकी प्रार्थना का क्या फल होगा? यह असाध्य रोग है।

थोड़ी देर तक वे सब चुप रहे। गम्भीरता पूर्वक सोचने के बाद एकने कहा—मणिकर्णिका पर एक वृद्ध साधु रहते हैं, आप उनके पास जाइए। वे आपको कुछ बता सकते हैं।

श्यामसुन्दर—क्यों? क्या वे कोई ज्योतिषी हैं।

दूसरा—नहीं, वे रात भर गङ्गा की ओर एकटक देखते बैठे रहते हैं। प्रातः काल गङ्गा पार जा स्नान आदि करते हैं और दिन को सोते हैं। लोग कहते हैं वे भूत जगाते हैं। जो हो। अगर रात को इधर आई होगी तो उनके सिवाय और कोई कुछ नहीं बता सकता।

श्योसुन्दर उन वृद्ध साधु के पास पहुँचा। अपने कथन के अनुसार वे तीनों स्नान करने वाले भी उसके साथ गये। साधु महराज ने बताया कि उन्हें एक युवती स्त्री जरूर मिली है। वह जीती है और इस समय पं० सुधानिधि शास्त्री के यहाँ होगी।

शास्त्री जी का नाम सुनते ही वे तीनों चौंक पड़े और

बोले—हाँ, अब हम कह सकते हैं कि आपकी चिन्ता दूर नहीं हो सकती। शास्त्री जी के चङ्गुल में फँस कर स्त्रियों का निकलना मुश्किल है।

"ऐं क्या कहते हो?" साधु महराज बोले।

"यही कि आपने उनके हाथों में सौंप कर एक अबला का सत्यानाश किया। विद्वान हैं, पर चरित्र भ्रष्ट हैं।"

"ऐसी बात?"

"हाँ!"

साधुमहाराज—"शिव शिव" कहते हुए उठ खड़े हुए और श्यामसुन्दर से बोले—तुम उस दुःखिनी के स्वामी हो।

श्यामसुन्दर ने जवाब दिया—नहीं वह मुझ जीवित की विधवा है।

"चलो, देखें कैसा शास्त्री है" कहते हुए बाबा जी हाथ में चिमटा लेकर उठ खड़े हुए और विश्वनाथ की गली की ओर चल पड़े। श्यामसुन्दर उनके पीछे चला। वे तीनों व्यक्ति भी साथ चले।

शास्त्री जी का द्वार भीतर से बन्द था। बड़ी देर तक आवाज लगाने के बाद एक नौकर बाहर आया और बोला—आज उनसे भेंट नहीं हो सकती। वे बीमार हैं।

बाबा जी दृढ़ता के साथ बोले—जाओ कहो भेंट करना जरूरी है।

नौकर फिर वापस आकर बोला—एक हफ़्ते तक वे किसी से न मिलेंगे। डाक्टर ने मने किया है।

नौकर से और कुछ न कह कर बाबा जी अन्दर घुस गये। उनके साथ श्यामसुन्दर आदि भी चले गये। बेचारा नौकर भयभीत पहरे दार की तरह चुप चाप खड़ा रह गया।

ये लोग सीधे उस कमरे में चले गये जिसमें शास्त्री जी अपना सम्पूर्ण शरीर चद्दर से ढके पड़े थे।

"क्या बात है शास्त्री जी"—कहते हुए बाबा जी ने उनके मुँह से चद्दर हटा दिया।

लोगों ने आश्चर्य के साथ देखा कि शास्त्री जी के चेहरे पर नाक नहीं है, एक आँख बैठ गई है और दोनों गालों पर नाखून के गहरे खरौट बने हैं।

"मैं सपना तो नहीं देखता हूँ शास्त्री जी"—बाबा जी ने कहा।

शास्त्री जी ने अपनी एक आँख से बाबा जी की ओर देखा, कमरे में चन्द्रकला की तलाश में चारों तरफ नज़र दौड़ाते हुए श्यामसुन्दर की तरफ देखा, उन तीनों नौजवानों की तरफ देखा। आत्मग्लानि से उनका सिर नीचा हो गया। और इतने आदमियों को कमरे में एक साथ देख कर वे डरे भी। अपने प्रश्नों का उत्तर न पाकर बाबा जी ने झुंझला कर कहा—बोलते क्यों नहीं हो शास्त्री जी, तुमको क्या हो गया है?

शास्त्री जी सेंध पर पकड़े गये चोर की तरह दबी ज़बान से बोले—"अपने कर्मों का फल भुगत रहा हूँ, महराज।"

"गङ्गा से निकाली जाकर जो युवती आपके यहाँ आई थी वह कहाँ है?" श्यामसुन्दर ने ज़ोर देकर कहा।

"वह यहाँ से भाग गई।"

"क्यों भागी।"

"देखते नहीं हो मेरी क्या दशा हो रही है। डायन के समान मुझ पर टूट पड़ी, नाखूनों से और दाँतों से मुझे काट डाला। मेरा रुपया पैसा लूट कर सब चली गई।"

"गलत बात उसे तुमने कहीं छिपा रखा होगा?" उन तीनों नौजवानों ने कहा।

कमरे में एक खूँटी पर चन्द्रकला का लँहगा टँगा था। उसे उठा लाकर और शास्त्री जी को दिखा कर श्यामसुन्दर ने कहा—'यह लहँगा किसका है?'

"मेरी बेटी का है।"

श्यामसुन्दर जो उनकी बातें सुन कर गुस्से में भर रहा था बोला—पाखण्डी, झूठे, बेईमान, यह मेरी स्त्री का लहँगा है। इसे मैंने मिर्जापुर में उसे पहने देखा था।

बाबा जी ने भी लहँगे पर गौर करके कहा—हाँ यह उसी स्त्री का लहँगा है। ठीक बताओ शास्त्री जी वह कहाँ है?

मारी गई

शास्त्री जी—आपने उसे जिस काम के लिए दिया था वह तीनों शिव का

वह काम करके वह यहां से चली गई। मैं पहले ही से जानता था कि मेरी विद्या और बुद्धि काशी वालों को असह्य हो रही है मुझे बदनाम करने के लिए आप लोगों ने अच्छा जाल रचा।

अब तो वृद्ध बाबा जी को भी गुस्सा आ गया। वे चिमटा तान कर शास्त्री जी के पास खड़े हो गये और कुपित होकर बोले—धूर्त ! पाजी !! ठीक जवाब दे नहीं तो मारते मारते बेदम कर दूँगा।

शास्त्री जी भय से कांप उठे और चीख मार कर बोले—कोई है ? टेलीफोन से पुलिस को खबर दो कि मेरे घर में डाकू घुसे हैं और मुझे मारे डालते हैं।

बाबा जी ने कहा—पुलिस से हम नहीं डरते। पचासों आदमियों के सामने मैंने तुम्हें उस लड़की को सौंपा था। उसे हाजिर करो।

हल्ला सुनकर शास्त्री जी की पत्नी और पुत्री दोनों आईं। शास्त्री जी के लिये वे बहुत दुखित थीं। कहीं उन पर और मुसीबत न आजाय यह सोच कर वे दोनों बाबा जी के चरणों से लिपट गईं और बोलीं—महाराज, क्रोध शान्त हो ?

"वह लड़की कहां है ?"

आपने ...स घर में नहीं है।"

कहा—बोल... गई ?"

गया है ? ...ीं सकती।"

"शास्त्री की यह दशा किसने की।"

"उसी ने।"

"क्यों ?"

थोड़ी देर तक मां बेटी चुप रहीं। फिर माँ बोली—इनका स्वभाव तो तुम जानते हो बाबा जी ?

"हां अब जान गया हूँ।"

"जो बिगड़ गया वह बन नहीं सकता ? अपराध क्षमा हो।"

बाबा जी शान्त हो गये। इन स्त्रियों की बातों का अविश्वास करने का कोई कारण न था। वे शास्त्री जी से फिर बोले—क्यों ये क्या कहती हैं।

अपराधी को साहस नहीं होता ? शास्त्री जी दीन दृष्टि से बाबा जी की ओर देखने लगे।

सुन्दरी स्त्री से तिरस्कृत होने पर या तो मनुष्य आत्महत्या कर लेता है या उसके दिल में वैराग्य उत्पन्न हो जाता है और वह ईश्वर की तरफ बढ़ता है। शास्त्री जी में दूसरे प्रकार के भाव उसी समय से उठ रहे थे उनके मुंह से निकल गया—ये स्त्रियां जो कुछ कहती है ठीक कहती हैं।

बाबा जी—यह गुरुतर अपराध करने का साहस तुमने कैसे किया।

शास्त्री जी—मैं अन्धा हो गया था। मेरी बुद्धि मारी गई थी। मेरी विवेक शक्ति का नाश होगया था। ये दोनों शिव का

दर्शन करने चली गई थी। नहीं ये क्यों गई थी मैंने ही इन्हें यही पापाचार करने के लिये भेजा था। पर मैंने बड़ा धोखा खाया। सती स्त्रियों की कहानी मैंने पढ़ी थी उन्हें देखा नहीं था कि वे कैसी होती हैं। शायद यही दिखाने के लिये विधाता ने चन्द्रकला को मेरे पास भेजा था। मैंने उससे अनुचित प्रस्ताव किया। उसने अस्वीकार किया। मैंने बलप्रयोग करना चाहा बस उसने मेरी यह दुर्दशा की। उसकी कोमल शक्ति में इतना बल कहाँ से आया यह मैं अब तक नहीं समझ सका हूँ। अपने नाखून और दांतों से उसने मेरी यह दुर्दशा करदी। मेरी नाक कट गई, आंख फूट गई, मेरी कीर्ति मिट्टी में मिल गई। अब मेरी समझ में नहीं आता कि मैं अपने इस पाप का प्रायश्चित्त किस प्रकार करूँ।

"तो अभी उसका धर्म नष्ट नहीं हुआ" श्यामसुन्दर ने कहा!

शास्त्री जी—उसके सामने सीता का आदर्श है। उसका सतीत्व न नष्ट हुआ और न मैं समझता हूँ कभी हो सकता है—वह मर जायेगी पर अपनी मर्याद के बाहर न जायगी—।

श्यामसुन्दर—आपसे कुछ कहती थी कि वह क्या करेगी।

शास्त्री जी—वह अपने पति को ढूढ़ेगी। उसका विश्वास है कि समाज से च्युत किये जाने पर भी पति उसे अपने प्रेम का दान देंगे? पति का दर्शन करने की आशा से वह जीवित रहने का उपाय करती रहेगी।

श्यामसुन्दर—यहाँ से वह कहाँ गई।

शास्त्री जी—कुछ कह नहीं सकता।

बाबा जी—चलो पुलिस में इत्तला करें सम्पूर्ण शहर में खोज करें, मुमकिन है मिल जाय।

श्यामसुन्दर—मैं चाहता हूं कि पहिले मैं स्वयं शास्त्री जी के घर की तलाशी लेलूं।

शास्त्री जी—आप उसके कौन हैं।

श्यामसुन्दर—स्वामी।

शास्त्री जी—आपको अधिकार है! आप कोना कोना देख सकते हैं।

श्यामसुन्दर—उन तीनों व्यक्तिओं के साथ शास्त्री जी का घर तलाशने लगा। तमाम ढूढ़ डाला। कहीं कुछ पता नहीं चला हाँ। एक कमरे में सुन्दर साड़ी पहने हुए उसका एक चित्र मिला। श्यामसुन्दर उस चित्र को उठा लाया और बोला—यह उसी का फोटो है।

शास्त्री जी—हाँ।

श्यामसुन्दर—उसने खिचाया था।

शास्त्री जी—नहीं, मैंने छिपकर खींचा था।

श्यामसुन्दर चित्र को गौर से देखने लगा। अङ्ग अङ्ग से यौवन और तेज फूटा पड़ता था। चेहरे पर असीम सौन्दर्य के साथ निराश और वेदना का संग्राम छिड़ा था। मानों वे उसके सौन्दर्य को हरने का प्रयत्न कर रहे थे। अंगुलियाँ और

नाखून स्पष्ट थे उसने चित्र को हृदय से लगा लिया। आह वह एक रोज पहले शास्त्री जी के यहां क्यों न पहुँचा।

शास्त्री जी बोले—आप लोग मुझे क्या दण्ड देना चाहेंगे।

श्यामसुन्दर—दण्ड देने का काम मेरा नहीं है। और आपको दण्ड देने से भी मेरी चन्द्रकला मुझको न मिलेगी पर, मैं यह प्रार्थना आपसे जरूर करूंगा कि आप अबला और असहाय स्त्रियों के साथ ऐसा विषम व्यवहार न किया करें।

शास्त्री जी—मेरी हालत अच्छी नहीं है, नहीं तो मैं अभी आप लोगों के साथ चलता और इस काम में मदद देता।

किसी ने कुछ जवाब न दिया। बाबा जी और श्यामसुन्दर आदि सब बाहर चले गये। पत्नी की स्मृति स्वरूप वह लहंगा और चित्र दोनों श्यामसुन्दर अपने साथ लेते गये?

शास्त्री जी ने बिस्तर में फिर अपना मुंह छिपा लिया। उनकी पत्नी ने कहा—इस घर में गङ्गा माता की मूर्ति फिर से स्थापित करनी होगी इसके बिना कल्याण न होगा।

और कोई अवसर होता तो शास्त्री जी उसे डाट देते पर आज उन्होंने ऐसी मुखाकृति बनाई।मानों उन्होंने पत्नी की बातों पर अब तक ध्यान न देकर महान भूल की है और उसी का प्रायश्चित्त कर रहे हैं।

तेरहवां परिच्छेद

कुमारी श्यामा

बनारस में कई दिन तक निरन्तर खोज करते रहने पर भी जब चन्द्रकला का कुछ पता न लगा तो श्यामसुन्दर इलाहाबाद चला आया। यहां के एक हाई स्कूल में उसे चालीस रुपया महीने की एक अध्यापक की जगह मिल चुकी थी। यह जगह उसने मिर्जापुर से आकर ठीक की थी। जिसके लिए उसने यह नौकरी ठीक की थी जब वही नहीं है तो नौकरी करके क्या होगा? यह सोचकर नये साल से उसने फिर पढ़ना निश्चित किया। लेकिन पढ़ने में भी तो जी नहीं लगेगा और यदि जी भी लगे तो खर्च कहां से आएगा? पिता खर्च दे सकते हैं पर उनकी सहायता से जब उसका आधा अङ्ग वञ्चित रह गया तो उसके लिये भी वह त्याज्य होनी चाहिये। हाँ, उसके पास मोतिओं का एक हार है जिसे बेचकर वह अपनी सारी पढ़ाई बड़े मजे में खतम कर सकता है। परंतु वह हार बेच कर केवल अपना उदर भरने का भी तो उसे अधिकार नहीं है। हार तो उसे इसलिए मिला है कि उससे वह अपनी पत्नी का प्रतिपाल करे। आह! उसका जीवन धूल में

मिला चाहता है। कौन जाने उसके होठों पर अब कभी हंसी आएगी या नहीं। उस समय उसकी दशा उस गृहस्थ की सी थी जो घर में आग लग जाने से स्त्री बच्चों को ईश्वर के भरोसे छोड़ सड़क पर आ खड़ा होता है। उसे जान पड़ा मानों वह कायर है; उसे जीवन अत्यन्त प्रिय है, वह मृत्यु से डरता है, वह चन्द्रकला जैसी धीरा नारी का पति होने लायक नहीं है। अपने आपको मन ही मन धिक्कारता हुआ वह अपनी इस भूल पर पछताने लगा कि उसने मिर्जापुर के धर्मशाले में चन्द्रकला से यह क्यों न कहा कि तुम मेरी हो, मेरे साथ चलो। आह! उससे भयङ्कर भूल हो गई और उसकी भूल का दण्ड मिल रहा है। संसार से अनभिज्ञ कोमल कलेवरा चन्द्रकला को निस्सहाय छोड़ देना इससे बड़ी भूल और क्या हो सकती है।

क्या करे और क्या न करे? चारो तरफ उसे अन्धेरा ही अन्धेरा दिखाई पड़ता है। वह बनारस में ही क्यों नहीं रहा इलाहाबाद क्यों चला आया? शायद इलाहाबाद में उसे चन्द्रकला मिल जाय। सम्भव है उसे तलाशती हुई वह इलाहाबाद आ रही हो। इसीलिये वह यहाँ अपने कालिज के चारों तरफ चक्कर लगा रहा है ताकि उसे कालिज के पास आकर ढूँढ़ने में बहुत कठिनाई न पड़े।

इतने दिनों से श्यामसुन्दर ने कपड़े न बदले थे। बदलता कहाँ से जितना पहने हुए था उसके सिवाय उसके पास और कुछ था ही नहीं। कपड़े मैले हो गये थे और उनसे दुर्गन्ध

निकलने लगी थी। दातौन करना, बाल बनवाना, स्नान करना, आदि भी वह भूल सा गया था जिससे उसकी दशा अपाहिजों की सी हो रही थी। बिना खाए नहीं रह जाता था इसलिए बाजार में चने आदि लेकर वह अपनी क्षुधा मिटा लेता था और उन्हीं कपड़ों को पहने हुए जहाँ चाहता था पड़ रहता था और सो जाता था। किसी समय में ऐसे मलिन वस्त्र धारियों से वह बहुत घृणा करता था; शायद इसीलिए विधाता ने दण्ड स्वरूप उसे यह वेष बनाने के लिये विवश किया है।

इस प्रकार दिन भर कालेज के चारों तरफ घूमना और रात को कहीं पड़ कर सो रहना श्यामसुन्दर का नित्य का काम हो गया। धीरे धीरे गर्मी की छुट्टी समाप्त हुई। पानी बरसा, पृथ्वी ने अपनी हरी मुस्कान से मेघनाद को धन्यवाद दिया। वीरान कालेज में फिर से चहल पहल शुरू हुई, सैकड़ों नए विद्यार्थी आए। पर श्यामसुन्दर की चन्द्रकला न आई। वह उसकी तस्वीर लिये प्रस्तुत रहता कि इसी से उसको पहचानेगा। यहाँ यह लिखने में अत्युक्ति नहीं कि वह एक प्रकार से पागल सा हो गया था।

कालेज में सब काम समय पर होता। घंटा बजता प्रोफेसर निकलते, विद्यार्थी समूह जङ्गल में छिटकी रङ्ग बिरंगी गायों सा दिखाई पड़ता पर कोई यह न सोचता कि इस कालेज का पुराना विद्यार्थी श्यामसुन्दर कहाँ है। उसके साथी कभी कभी उसके पास से उसे घूरते हुए निकल जाते और उससे बात

तक न पूछते। शायद वे उसे पहचानने की कोशिश करते और पहचान न सकते।

एक दिन एक विचित्र घटना घटी। श्यामसुन्दर सदर फाटक के पास खड़ा इधर उधर देख रहा था कि उसे हरी घास की पगडंडी से उसकी ओर आती हुई एक उदासमना नवयौवना रमणी दिखाई पड़ी। श्वेत साड़ी पैर में ऊंची एंड़ो के जूते, हाथ में किताबें और सिर के बाल विचित्र ढङ्ग से संवारे हुए देख कर भी श्यामसुन्दर ने उसे चन्द्रकला होने का अनुमान कर लिया। उसके शिथिल शरीर में चैतन्यता आगई। आशा से उसकी आंखें चमक उठीं अपने मैले कपड़ों को ठीक करता हुआ वह तस्वीर हाथ में लेकर फाटक के बीचो बीच में खड़ा हो गया और मनही मन कहने लगा--"हे ईश्वर यह चन्द्रकला ही निकले। कोई और हो तो वह भी मेरे पास आते आते चन्द्रकला हो जाय। चाल ढाल से तो वही जान पड़ती है। साड़ी पहनने का ढंग भी वही है। केश भी उसी प्रकार खुले दीखते हैं। उम्र भी वही है। आने दो पास, पूछूंगा—देखो यह किसकी तस्वीर है। तस्वीर देख कर चक्कर में आजायगी। मैं कहूँगा कि मैंने अपना हृदय खोल कर तुम्हारी यह तस्वीर खिंचवाई है क्योंकि मेरे हृदय में तुम बसती हो। मेरे ऊपर बहुत खुश होगी। कहेगी--"प्राणनाथ दासी को अब न छोड़ना।"

इन विचारों में और तस्वीर देखने में श्यामसुन्दर इतना तल्लीन हो गया कि उसे पता न चला कि वह युवती उसके पास से कब आकर निकल गई। जब उसने अपना सिर उठाया तो हरी घास की पगडंडी खाली थी। चकबका कर उसने पीछे की ओर देखा। युवती चली जा रही थी। श्यामसुन्दर ने पुकार कर कहा--"श्रीमती जी, जरा ठहरिये आप से एक बात कहनी है।"

युवती खड़ी हो गई। श्यामसुन्दर ने पास जा कर कहा देखिये यह आपकी तस्वीर है?

युवती ने तस्वीर को देखा और फिर श्यामसुन्दर को गौर से देखा।

श्यामसुन्दर शीघ्र जवाब चाहता था। युवती को चुप देख उसने फिर कहा—है न आप ही की तस्वीर?

इस प्रश्न का जवाब न देकर युवती ने कहा—आप श्यामसुन्दर तो नहीं हैं?

"हाँ, हाँ मैं ही श्यामसुन्दर हूं। और आप का नाम चन्द्रकला है?"

"बी० ए० पास कर लिया और अभी तक सनक नहीं छूटी। जान पड़ता है इस बार तुम्हें विद्यार्थिओं ने किसी भारी मजाक का शिकार बनाया है।"

श्यामसुन्दर अपने प्रेमिकपने के कारण कालिज में बावला

समझा जाता था और विद्यार्थी वर्ग उसका प्रायः मजाक उड़ाया करते थे।

श्यामसुन्दर—क्या मैं गलती करता हूँ।

युवती—ज़रूर मेरा नाम कुमारीश्यामा है। दो साल मेरे साथ एक ही क्लास में पढ़ने पर भी तुम मुझे नहीं पहचानते हो? क्यों।

श्यामसुन्दर ने युवती को गौर से देखा। उसका स्वप्न दूर हो गया। उसका नशा उतर गया। वह अत्यन्त लज्जित हुआ। शिर नीचा करके उसने कहा–कुमारीश्यामा, बेढब भूल हो गई। कृपा पूर्वक मुझे क्षमा करो। मैं होश में नहीं हूं।

श्यामा—सो तो जानती हूँ कि तुम होश में नहीं हो पर तुमको हो क्या गया है? इस तस्वीर का क्या मतलब है। कोढ़ियों की सी यह सूरत क्यों बना रखी है दीवाने हो गये हो क्या?

श्यामसुन्दर—मैं अन्धा होगया हू। आदमी नहीं पहचानता हूँ। बहिन मुझे क्षमा करो।

श्यामा—मैं तुम्हें अपराधी नहीं समझती। हां तुम्हारी हालत देखकर मुझे दुःख हो रहा है। इसीलिये पूछती हूँ कि तुम्हारे इस वेश का मतलब क्या है?

श्यामसुन्दर और श्यामा दोनों ने साथ ही बी० ए० की पढ़ाई खतम की थी। दरजे में और रास्ते में दोनों एक दूसरे को देखते थे पर उनकी बातें कभी नहीं हुई थीं। बात चीत होने

का यह पहला ही मौका था। श्यामसुन्दर ने कहा—मेरा यह वेश तुम्हें अच्छा न लगेगा पर इससे अच्छा वेश बनाने की मुझमें सामर्थ नहीं है!

श्यामा—तुमको जिसने न देखा हो उससे कहो। तुम जमीदार के लड़के हो।

श्यामसुन्दर—अब मुझे कहीं पड़ रहने को भी जगह नहीं है।

श्यामा—जमीदारी बिक गई।

श्यामसुन्दर—नहीं, मैं बिक गया।

श्यामा—इसी तस्वीर के हाथ?

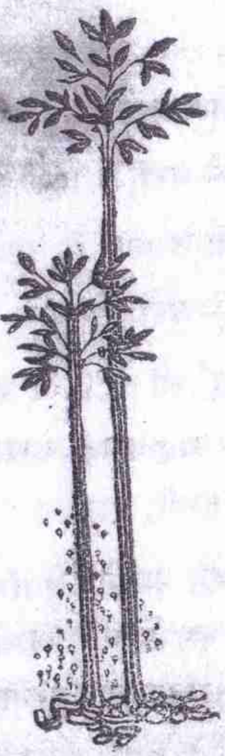
श्यामसुन्दर—नहीं, विपत्ति के हाथ।

श्यामा—सुनूँ भी तो तुम्हें क्या दुःख है?

श्यामसुन्दर—यह लम्बी कथा है। फिर कभी बताऊँगा। तुम्हें देर हो रही होगी, जाओ।

किसी को दुखी देखकर श्यामा से रहा नहीं जाता था। हजार सङ्कट सह कर वह दुःखियों का दुःख दूर करने का प्रयत्न करती थी। श्यामसुन्दर तो उसका सहपाठी था। उसे वह इस वेश में कैसे छोड़ सकती थी। उसने तस्वीर श्यामसुन्दर के हाथ से लेली और कहा—चलो मेरे बंगले पर चलो।

जिस तस्वीर के सहारे अपनी पत्नी का पता लगाना चाहता था उसे श्यामा के हाथों में जाती देख श्यामसुन्दर उसका आज्ञाकारी होकर उसके पीछे पीछे ऐसे चलने लगा जैसे कोई गाय उस आदमी के पीछे पीछे चलती है जो उसका बछड़ा लिये रहता है।



चौदहवां परिच्छेद

——:o:——

मोहन मन्दिर

इलाहाबाद में जार्जटाउन नाम का एक नया मुहल्ला आबाद हुआ है। इस मुहल्ले में घूमने से ऐसा ज्ञान पड़ता है मानों इसमें प्रकृति को कैद करने की कोशिश की गई है। पेड़, पौधों, घास, लताओं, गमलों और क्यारियों से सजा हुआ। यह मुहल्ला बहुत ही रमणीक प्रतीत होता है। हरियाली के बीच में खूबसूरत बने बंगले रात को जब बिजली की रोशनी से स्नान करते हैं तो देखते ही बनता है। यह उन लोगों का मुहल्ला कहा जाता है जो दूसरों की बेवकूफियों के कारण मालामाल हो रहे हैं। वकील, बैरिस्टर, प्रोफेसर, डाक्टर, एडीटर आदि आदि नामधारी मानव मूर्तियाँ इस मुहल्ले में अपने आप आकर स्थापित होगई हैं और संसार को इस बात का उपदेश दे रही हैं कि यदि मोक्ष चाहते हो तो हमारी पूजा करो। इस युग के देवता हमीं हैं। मन्दिर में मसजिद में या गिरजे में जाने से जो मनोरथ न सफल होगा वह हमारी सेवा में आने से होगा।

कुमारी श्यामा का बँगला भी इसी मुहल्ले में है। उसके बाप मोहनदास पुराने और नामी वकील हैं। उसका भाई

सुखविलास इसी साल विलायत से बैरिस्टरी पास करके आया है। मोहनदास ने इतना रुपया पैदा किया है कि उसका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। इनका बँगला मोहन मन्दिर के नाम से मशहूर है। अभी हाल में यह बन कर तैयार हुआ है। बँगले के चारों तरफ खासा बाग लगा है। सामने हरी घास का विस्तृत मैदान है। दाएँ बाएँ रङ्ग विरङ्गे फूल, पौधे आदि नज़र आते हैं। पीछे केला, आम, अमरूद, फालसा, नारङ्गी, नीबू आदि के पेड़ हैं। जिसके पीछे नौकरों के लिए एक बारिक सी बनी है। बीच में सफ़ेद पुता हुआ सङ्गमरमर के फर्श का सुन्दर भवन है। इसमें बाइस बड़े बड़े कमरे हैं। जिनमें से सामने के दो कमरों में मोहनदास और उनके पुत्र का दफ्तर है। बीच का कमरा कुटुम्ब के विनोद आदि के लिये है। दाहिने तरफ के कमरों में पुस्तकें तथा अन्य आवश्यक सामान हैं। शेष भवन जनाना महल बोला जाता है। पर इसमें दो स्त्रियाँ रहती हैं। कुमारी श्यामा और उसकी भाभी जिसे सब लोग रानी कहते हैं। श्यामा की माँ को मरे आज कई साल हो गये। जनाने महल से मिला हुआ एक छोटा सा आहाता भी है जो खास कर रानी के लिए बनवाया गया है। बिजली की रोशनी से, खिड़कियों और दरवाज़ों से, पर्दों से, सुन्दर सुन्दर मेज कुर्सियों और पलंगों से तथा रङ्ग विरङ्गे पर्दों और चित्रों से यह बंगला खूब सजाया गया है।

कुमारी श्यामा के पीछे पीछे जब श्यामसुन्दर ने इस बंगले

में प्रवेश किया तो मोहनदास घास के मैदान में टहल रहे थे।

"हाथ में क्या लिए हो बेटा ?" श्यामा के पास आकर बोले। बेटी को प्रेमाधिक्य के कारण वे बेटा ही कह कर पुकारा करते थे।

"यह आपकी वस्तु है।" श्यामा ने श्यामसुन्दर की ओर इशारा करके कहा।

मोहनदास बोले—मैंने तो शायद इन्हें पहले कभी नहीं देखा।

श्यामा—नहीं. ये पहली ही बार यहाँ आए हैं।

मोहनदास—बड़ी कृपा की, कैसे आए ?

श्यामा—मैं इन्हें जबरदस्ती लिवा लाई हूं ?

मोहनदास—किसी विशेष कारण से ?

श्यामा—हाँ

मोहनदास—क्या ?

श्यामा—सब बताऊंगी। अभी तो आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करके इनके रहने के वास्ते एक कमरा खाली करा दें। मैं खुद कुछ नहीं जानती हूं। ये स्वयं बतायेंगे।

मोहनदास—बिना जाने इन्हें हम अपना मेहमान कैसे बना सकते हैं।

श्यामा—ओह ! इन्हें मैं खूब जानती हूं। इस साल इन्होंने मेरे साथ ही बी० ए० पास किया है।

मोहनदास ने श्यामसुन्दर की ओर देख कर मुस्कराते हुए कहा—आप लहंगा भी पहनते हैं क्या ?

श्यामसुन्दर अब तक एक सीधे बैल की तरह खड़ा था । इस प्रश्न का क्या उत्तर दे मानो यही पूछने के लिए वह श्यामा की तरफ देखने लगा । श्यामा उसके मन का भाव ताड़ गई । उसने विनय भरी वाणी से कहा—"पिता जी, इसमें अवश्य कोई गूढ़ रहस्य छिपा हुआ है । उसी को जानने के लिए मैं इन्हें यहाँ लाई हूँ । पहले इन्हें कहीं ठहरा दीजिए, ये एक प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं पर इस समय समय की गति से खाना-बदोश हैं । इनके स्वस्थ चित्त होने पर सब बातें मालूम होंगी ।

मोहन दास घर बार से रहित होने का कड़ुआ अनुभव कर चुके थे । श्याम सुन्दर को देख कर उन्हें अपनी विपत्ति के दिन याद आए । और पूछ ताछ न करके उन्होंने दो तीन नौकरों को बुलाकर हुक्म दिया—"इन बाबू साहेब के लिये दूसरा किताब घर खाली कर दो । उसमें एक पलँग, एक मेज और दो तीन कुर्सियाँ डाल दो ।"

बात की बात में इस आज्ञा का पालन हुआ । श्यामा ने श्यामसुन्दर को लेकर उस स्वच्छ कमरे में प्रवेश किया । वह तस्वीर श्यामा ने दीवाल से टाँग दी और लहँगा एक शीशे की आलमारी में लटका दिया—तब बोली—"मिस्टर श्यामसुन्दर लीजिए ये चीज़ें आपकी आँखों के सामने रहेंगी । अब मेरी

एक बात और मानिए । कपड़े बदल डालिए और हजामत बना लीजिए ।

श्यामसुन्दर—"क्या इन सब चीज़ों को उतार कर रख दूँ और वह लहँगा पहन लूँ ?"

श्यामा—नहीं नहीं, मेरा यह मतलब नहीं है ।

यह कहती हुई सुखबिलास के कमरे में गई और बोली—"भाई जी, अपना एक कुर्ता, एक धोती और सेफटी रेज़र दे दीजिए ?"

सुखबिलास एक अँग्रेज़ी उपन्यास पढ़ने में इतना तल्लीन था कि उसने इस विषय में बिना कुछ पूछ ताछ किये अपने स्टोर की चाभी बहिन को दे दी ।

दूसरे ही क्षण हजामत बनाकर और नहा धोकर श्यामसुन्दर एक दर्शनीय युवक हो गया । उसका काया-पलट हो गया ।

नौकरों ने आपस में कानाफूसी की—हो न हो इस आदमी से बेटी साहेब की आशनाई जरूर है ।

एक वृद्ध नौकर ने घर जाकर घोषणा कर दी—रोज ही तो दो चार आते रहते हैं । माँ साहेब थीं तो कुछ देख रेख रखती थीं । वकील साहेब को तो कोई फिकर ही नहीं है । उंह, आज कल के बड़े आदमियों की बेटियों से तो चमार भङ्गियों की लड़कियाँ अच्छी । वे अपना धर्म तो समझती हैं ।

पन्द्रहवां परिच्छेद

——○•○——

जाकर जेहि पर सत्य सनेहू ।
सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू ॥

श्यामसुन्दर को मोहन मन्दिर में रहते कई दिन हो गए पर उसकी कहानी किसी ने नहीं सुनी। कुटुम्ब से खूब परिचित हो जाय तब वह अपनी आत्मकथा कहे तो खूब दिल खोल कर सुनाएगा यही सोचकर कुमारी श्यामा ने अभी ऐसा अवसर नहीं आने दिया था।

नौकर चाकर ही नहीं स्वयं मोहनदास भी अपनी बेटी को सन्देह की दृष्टि से देखने लगे थे। पर वे बड़े उदार विचार के व्यक्ति थे। प्रेम सम्बन्धी स्वतन्त्रता वे लड़कियों को खूब देना चाहते थे। इसलिये वे इस सम्बन्ध में इच्छा रहते हुए भी कुछ जानने की कोशिश नहीं करते थे। श्यामसुन्दर में रूप और गुण दोनों मौजूद हैं इसलिये अगर उनकी लड़की उस पर आसक्त हो गई है तो यह उसके स्त्री-स्वभाव के बाहर की बात नहीं है। यह सोचकर भी अपने आपको वे ढाढ़स बँधाया करते थे। सुखबिलास को भी श्यामसुदर में कोई ऐब नहीं दिखाई

पड़ा। हाँ, रानी के पास घर की दासियों द्वारा यह समाचार पहुँचने लगा कि कुमारी श्यामा ने बाप के घर में अपने प्रेम पात्र को ला रक्खा है। सयानी लड़की है। ब्याह नहीं होता तो बेचारी क्या करे? इस तरह की आजादी न होती तो बाप के मुँह पर कालिख पोत कर यह पढ़ी लिखी नौजवान लड़की जरूर किसी के साथ भग निकलती। जैसा छिछोरा भाई है जान पड़ता है बहिन भी वैसी ही छिछोरी निकलेगी।

जब नन्द की बहुत शिकायत न सुनी गई तो एक दिन रानी ने उससे कहा—कुमारी, तुम अपना ब्याह कब करोगी?

श्यामा ने जवाब न दिया—ब्याह करके बन्धन में पड़ने से क्या फायदा है!

रानी तब तो जो कुछ मैं सुनती हूँ जान पड़ता है ठीक है।

श्यामा—क्या सुनती हो?

रानी—कहने का साहस नहीं कर सकती? तुम्हें कलङ्क लगाने को मेरा जी नहीं चाहता।

श्यामा - कहो क्या बात है? तुम्हें मेरे सर की कसम है जो न कहो?

रानी—बङ्गले में तुमने किसको ठहरा रखा है?

श्यामा—अपने एक साथी को?

रानी—उन्हें तुम प्यार करती हो?

श्यामा—प्यार तो नही करती हूं पर यदि प्यार करूं तो क्या कोई हर्ज है?

रानी—तुम्हारा अभी ब्याह नहीं हुआ है इस लिये चाहे जिसे प्यार कर सकती हो ?

श्यामा—होजायगा तो ?

रानी—तो जिसके साथ ब्याह होगा उसके सिवाय और किसी को प्यार नहीं कर सकोगी ?

श्यामा—इसी लिए तो कहती हूँ कि ब्याह बन्धन है ?

रानी—यह बन्धन अच्छा है !

श्यामा—तुम इसमें बंधी हो न, इसी लिये। भाई साहब से पूछो ?

रानी—हाँ वे तो इस बन्धन को तोड़ फेकना चाहते हैं ?

श्यामा—वे बिलायत हो आयें हैं, इसी से ?

रानी—कहाँ की बात कहाँ आकर खतम हुई ? सच बताओ वह तुम्हारा साथी कौन है ?

श्यामा—हमारी तुम्हारी तरह एक मनुष्य।

रानी—उसी के साथ तुम ब्याह करोगी ?

श्यामा के दोनों गाल लज्जा से लाल हो गये। अपने होठों पर आई हुई मुस्क्यान को दबाते हुए उसने कहा—छिः कैसी बेहूदी बातें करती हो ?

रानी ने श्यामा की आँखों में घूरते हुए कहा "मन मन भावै मूड़ी हिलावै" इसी को कहते हैं ?

श्यामा ऐसे चुप हो गई मानो उसने कोई अपराध किया हो ? श्यामसुन्दर से कभी उसकी बात चीत नहीं हुई थी। उसे

कालेज में वह अक्सर देखती जरूर थी। वह उसे सब विद्यार्थियों से अच्छा हँसमुख और सुन्दर प्रतीत होता था। उसमें कुछ आकर्षण जरूर था पर वही एक नहीं था कि श्यामा उसके लिये निर्लज्ज हो जाय ' सम्भव है श्यामसुन्दर को वह इसी पूर्वस्मृति के जग उठने से बंगले में ले आई हो पर अब तक उसके हृदय में श्यामसुन्दर के प्रति कोई ऐसा भाव पैदा नहीं हुआ जिसे वह प्यार कह सके। उसने कहा—"भाभी, तुमको क्या हो गया है ? वह एक असहाय पथ का भिखारी है उसकी दशा पर मुझे दुःख हुआ बस उसे मैं यहाँ लिवा लाई। प्यार करना होगा तो तुम्हारी तरह मैं पर्दे में थोड़े ही हूं। संसार में निकल पड़ूंगी और अपने मन की जोड़ी पसन्द कर लूंगी ?

श्यामा उत्तेजना में यह कह तो गई पर मन ही मन उसने यह भी सोचा कि संसार में श्यामसुन्दर से अच्छा युवक शायद कोई न होगा। उसे ऐसा ज्ञान पड़ा मानों उसने अपनी भाभी से अपने हृदय की बात नहीं कही ?

रानी ने कहा—जो हो तुम्हें इस युवक को बङ्गले में रखने का कारण स्पष्ट कर देना चाहिये ?

"अभी लो" कहती हुई श्यामा उस कमरे में आई जहाँ कुटुम्ब के लोग विनोद के लिये इकट्ठे होते हैं !

मोहनदास आराम कुर्सी पर लेटे हुक्का पी रहे थे। सुख बिलास पयानो बजा रहे थे। मोहनदास की बगल में एक सोफा पर श्यामसुन्दर भी बिराजमान थे। श्यामा को देखते ही सुख

बिलास ने कहा "लो बहिन जरा तुम प्यानो बजाओ। तुम अच्छा बजाती हो।"

श्यामा ने मुस्कराते हुए कहा—भाभी की आज्ञा है कि आज मिस्टर श्यामसुन्दर की आत्मकथा सुन ली जाय?

मोहनदास मानों किसी उलझन से बाहर निकल आये। एकाएक बोले ठीक तो है क्यों मिस्टर श्यामसुन्दर।

श्यामसुन्दर ने हंसने की चेष्टा करते हुए कहा, "क्यों नही?"

"तो फिर कह चलिये। सुखबिलास ने प्यानों से हाथ हटाते हुए कहा।

"ज़रा ठहरिए! भाभी को भी बुला लाऊं तब" श्यामा यह कह कर नाचती सी जनाने महल में चली गई?

विनोद भवन में स्वामी और ससुर के साथ बैठने का रानी के लिये यह पहला ही मौका था। वह सिकुड़ कर श्यामा की पीठ में मुंह छिपा कर उसके पास बैठ गई। करीब आधे घंटे में श्यामसुन्दर ने अपनी पढ़ाई, ब्याह, गौना, चन्द्रकला का त्याग-खोज और सुधानिधि शास्त्री के यहां उसका फोटो और लंहगा आदि पाने की कथा कह सुनाई?

सुन कर सब लोग दङ्ग रह गये। मोहनदास तो रोने लगे? रानी और श्यामा की भी आँखे डबडबा आई। सुखबिलास हिन्दूसमाज पर दाँत पीसने लगा। मोहनदास ने आवेग में आकर कहा जिस बात को मैंने अब तक यत्न से हृदय में छिपा

रखा था तुम्हारी व्यथा से अब वह बाहर निकली पड़ती है। मेरे ईन बच्चों को भी उस मुसीबत का ध्यान नहीं है। आज मैं भी दुःख कथा कहूँगा। सब लोग गौर से सुनो।

"मेरा जन्म राजपूताने की एक प्रसिद्ध रियासत में हुआ था। मेरे बाप उस रियासत के दीवान थे। बाप की जीवित अवस्था में ही मैंने कानून पास कर लिया था। बाप के बाद मैं उस रियासत का दीवान होता। पर विधि का कुचक्रचल रहा था। मेरे बाप बड़े समाज सुधारकों में माने जाते थे। एक ऊंचे कुल की ब्राह्मण विधवा जो आयु में १६ वर्ष से अधिक न थी एक बार एक पड़ोसी के यहाँ जिनका ब्राह्मण महाशय से बैर था, रात भर रह जाने के कारण घर से निकाल दी गई। मेरे बाप के पास ब्राह्मण देवता यह हुक्म निकलवाने के लिए आए कि रियासत का कोई आदमी उस विधवा को अपने यहाँ न रखे। पर बजाय ऐसा हुकम निकालने के पिता जी ने उसे अपने घर में रख लिया। तब यह बात दरबार के कानों तक पहुंचाई गई। दरबार ने मेरे बाप को उस लड़की को निकाल देने की आज्ञा दी। मेरे बाप ने इन्कार किया। बस उसी दम वे कैद कर लिये गये, हमारी रियासत जब्त होगई। मैं अपनी माँ और उस विधवा ब्राह्मणी के साथ राज्य से बाहर निकाल दिया गया। कई दिन मारे मारे फिरने के बाद मुझे जेल से लिखा हुआ पिता जी का एक खत मिला। उसमें उन्होंने लिखा था "बेटा, सर्वनाश तो हुआ ही पर इतने पर

भी यदि उस ब्राह्मण विधवा की तुमने रक्षा करली तो मैं समझूंगा कि हमारा यह सर्वनाश एक महान उद्देश्य को लेकर हुआ है। मैं चाहता हूँ तुम अँग्रेजी अमलदारी में चले जाओ और उस विधवा से शादी करलो। जीता लौटा तो फिर तुम्हें और तुम्हारी माता को देखूंगा और नहीं तो वहीं स्वर्ग में मिलना होगा।"

"बाप की चिट्ठी पाने के बाद मेरा और उस विधवा का ब्याह होगया। उसी के पेट से सुखबिलास और श्यामा ये दोनों रत्न उत्पन्न हुए हैं। उसी के पुण्य-प्रताप से आज हम फिर भिखारी से तरक्की करके बँगले में रहने योग्य हुए हैं। हाँ, एक बात कहना भूल गया। हम लोगों को लेकर माँ अपने पिता के यहाँ गईं। पर वहाँ भी साथ में विधवा होने के कारण हम लोग ठहरने नहीं पाए। हजारों मुसीबतों के बाद इस पुण्य क्षेत्र प्रयाग में पहुंचे। यहीं धीरे धीरे वकालत करके मैं उदर पोषण करने लगा। मैं जाति से निकाला हूं। मेरे कोई भाई बन्द नहीं है। आज अगर ईसाई होजाऊं तो कोई न पूछेगा क्यों होगये। पर हमें किसी की परवाह नहीं है। जो ठीक समझते हैं करते हैं। जब तक बनेगा राम का नाम लेंगे और अपने को हिन्दू कहेंगे। सुखबिलास का ब्याह नहीं होता था इसकी इच्छा थी कि यह विलायत से कोई मेम लाकर उसके साथ ब्याह करे पर यह मुझे अच्छा न जान पड़ा। इसलिये अनाथालय से एक कन्या लेकर इसका ब्याह किया

है। रानी जिसे तुम रानी के रूप में देखते हो एक दिन अनाथ थी, बेचारी के माँ बाप का कुछ पता नहीं था, रास्ते में पड़ी हुई मिली थी, वहाँ से अनाथालय में पहुंची। अनाथालय से निकल कर अब हमारे घर की स्वामिनी है। अब इससे कोई घृणा करे तो उसको मैं अपने घर में घुसने न दूँ। यह देवी है, पूजा के योग्य है। श्यामा के ब्याह की भी मुझे चिन्ता नहीं है। कट्टर हिन्दू चाहे सारी कुलीनता मेरे चरणों में डाल दें मैं उसे इस दुलारी को न दूंगा। यह उसी को दी जायगी जो इसका समुचित रीति से आदर करेगा, नहीं तो कुमारी ही रहेगी।"

इतना कहने के बाद मोहनदास फिर आरामकुर्सी पर लेट गये और हुक्का गड़गड़ाने लगे।

श्यामसुन्दर बोला—आपको पाकर मानों मैं अपने वास्तविक पिता को पा गया। मुझे भी उस विधवा के पेट से जन्म लेना था। आप मेरी चन्द्रकला को कदापि न दुरदुराते।

मोहनदास फिर बोले—कदापि नहीं। पर मेरा विश्वास है चन्द्रकला मिलेगी। वह चाहे जिस हालत में मिले उसे तुम स्वीकार करो और उसके खोजने का काम बराबर जारी रखो।

श्यामसुन्दर—कैसे खोजूँ।

मोहनदास—तुम मेरी बेटी के साथ एम० ए० में पढ़ना आरम्भ कर दो। मैंने ब्राह्मण विधवा का उद्धार किया था, मेरी बेटी ब्राह्मण विधुर का उद्धार करेगी, ऐसा जान पड़ता है।

श्यामसुन्दर—मैं पढ़ने लगूँगा तो क्या चन्द्रकला मुझे मिल जायगी।

मोहनदास—कुछ न कुछ तो मिलेगाही। धैर्य्य रखो, धैर्य्य से सब होता है।

पिता की यह बात सुनकर श्यामा कुछ लजा गयी। रानी उसकी पीठ में मुंह छिपा रही थी अब वही रानी की पीठ में मुंह छिपाने लगी।

मोहनदास ने हुक्का गड़गड़ा कर फिर कहना शुरू किया—मैं उसकी तलाश करवाऊंगा? यह काम स्त्रियों के जरिये होगा। वे बनारस्स में घर घर जाकर उसका पता लगायेंगी।

श्यामसुन्दर ने सन्तोष की साँस ली। मोतियों की माला निकाल कर मोहनदास के चरणों में रखते हुए कहा—चन्द्रकला की खोज में मैं इतना खर्च कर सकता हूँ।

माला को आश्चर्य्य से देखते हुए मोहनदास ने कहा—यह तो मेरी ही जान पड़ती है!

श्यामसुन्दर कुछ चौंका। भयभीत सा होकर बोला—मैं इसके पहिले आपके यहाँ कभी नहीं आया?

मोहनदास—नहीं, मेरा ख्याल है कि इसे रामनगर के तिवारी दौलतराम उड़ा ले गये हैं। अब यह जान कर कि वे तुम्हारे ससुर हैं—मेरा विश्वास दृढ़ हो गया। तुम्हें उन्होंने ही दी थी?

श्यामसुन्दर—नहीं, मेरी सास ने।

मोहनदास—ठीक है। अब समझ में आ गया, पर घबड़ाना मत, मैं यह माला लूंगा नहीं।

श्यामसुन्दर—चोरी के माल की सहायता से मेरी चन्द्रकला मिल सकती हो तो भी मैं उसे स्वीकार न करूंगा। अब यह माला मेरे लिये मिट्टी है। इसे आप मेरे काम में न लगाएं और चाहे जो करें?

"अच्छी बात है।" कहते हुए मोहनदास ने वह माला श्यामा को देकर कहा कि इसे रानी को पहना दो।

मोहनदास ने कहा—जब इतने दिनों की खोई हुई मेरी माला घूम फिर कर मेरे पास आगई तो यह हो नहीं सकता कि तुम्हारी चन्द्रकला तुम्हें न मिल जाय? महात्मा तुलसीदास ने झूठ नहीं कहा—

जाकर जेहि पर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू॥

अब श्यामा ने पयानो बजाया और सब लोग मिलकर जोर जोर से तुलसीदास की यही चौपाई गाने लगे। श्यामसुन्दर को ऐसा जान पड़ा मानों इस प्रेम सङ्गीत के समाप्त होते ही उसकी चन्द्रकला उसके पास आकर खड़ी हो जायगी।

———

सोलहवां परिच्छेद

मिस्टर और मिसेज़ रैमडस

जिस घटना के कारण जीवन के प्रभात काल में ही विपत्ति की डरावनी संध्या ने अपने निराश रूपी काले केश छिटका कर चन्द्रकला को चारों तरफ से घेर लिया था, उसे हुए पूरा एक वर्ष होगया। इतने थोड़े समय में चन्द्रकला को संसार का खूब ज्ञान होगया। उसे निश्चय हो गया कि इस जगत में स्वार्थ से खाली कोई नहीं है। धर्म, राजनीति और समाज नीति की आड़ में लोग जो काम करते हैं उसमें उनका स्वार्थ ही अधिक रहता है। विपत्ति से बढ़कर मनुष्य का दूसरा शिक्षक नहीं हो सकता। इस अनोखे शिक्षक के हाथों में श्रद्धापूर्वक आत्मसमर्पण कर देने के कारण उसे जो महान् शिक्षा मिल गई है वह भविष्य में पग पग पर उसकी सहायक होगी इसमें सन्देह नहीं।

इस एक साल में चन्द्रकला की रहन सहन में और उसके जीवन में जो घोर परिवर्तन होगया है उसका हाल सुनकर पाठक बिना आश्चर्य्य किए न रहेंगे। अब वह असहाया हिन्दू

अबला नहीं रही उसकी वेष भूषा बदल गई। घूंघट का स्थान हैट ने ले लिया, चूड़ियों के स्थान पर कलाई की घड़ी और झाँझों के स्थान पर पैरों में घुटने तक काले मोजे मौज मार रहे हैं। महावर की जगह बढ़िया जूते शोभा दे रह हैं साड़ी के विस्तृत साम्राज्य पर गाउन आदि ने मोरचाबन्दी कर रखी है। उसका नाम भी चन्द्रकला से बदल कर मिलचन्दा होगया है। अब वह बनारस कैंटूनमेंट के पास एक ईसाई परिवार में रहती है। हिन्दी लिखने पढ़ने का उसे खूब अच्छा अभ्यास होगया है। अंग्रेजी, सङ्गीत, आदि का सीखना भी उसने आरम्भ कर दिया है। अब वह एक प्रकार से अपने भूत काल के सारे दुखों को और निर्मोही सम्बन्धियों को भूल गई है। अगर उसे कुछ याद है तो केवल पति का यह कथन कि 'धैर्य्य रखना तुम्हें शीघ्र बुला लूंगा' और कुछ नहीं। जब जब पति परमेश्वर की इस बात को वह सोचती है तब तब उसे ऐसा जान पड़ता है मानों श्याम सुन्दर अंधेरे में खड़े होकर प्रेमपूर्ण चितवन उसकी ओर फेंकते हुए कहते हैं—"प्रिये, मुझे भूल मत जाना। मैं तुम्हारा हूँ तुम मेरी हो इस बात को याद रखना। चन्द्रकला को रोमाञ्च हो आता है और वह चाहती है कि हैट और बूट उतार फेंके और नङ्गे पाँवों तथा नङ्गे सिर जिस दिशा में उसके पति रहते हैं उधर को दौड़ जाय। पर जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं, इस साल भर के जीवन में संसार की कुटिलता का उसे ऐसा

ज्ञान होगया है कि केवल अपनी भुजाओं के बल पर घर से बाहर निकलने का साहस नहीं करती। ऐसा कोई पुरुष नहीं जो असहाय युवती को देखकर पशु न बन जाय। अगर होगा तो वह चन्द्रकला को मिला नहीं इसीलिये बेचारी पुरुष समुदाय से ऐसा डरती है जैसे मछली जल से बाहर की हवा से डरती है। उसकी इस मानसिक पीड़ा का उस ईसाई परिवार में किसी को ज्ञान नहीं है। होता तो शायद इसके दूर करने का भी यत्न किया जाता। इसके सिवाय चन्द्रकला को और कोई दुख नहीं है। यह सब मिस्टर और मिसेज़ रैमडस की कृपा का फल है।

प्रसङ्ग वश यहाँ मिस्टर और मिसेज़ रेमडस का कुछ परिचय दे देने की अवश्यकता है। मिस्टर रेमडस एक अधेड़ ईसाई हैं इनको देख कर लोग यही कहेंगे कि ये जन्म के ईसाई हैं पर बात वह नहीं है। ये हिन्दू से ईसाई हुए हैं। पहले ये जाति के काछी थे और इनका नाम रामदास है। पाठक देखें कि रेमडस इसी रामदास का अंग्रेज़ी अपभ्रंश है। लोगों को भ्रम में डालने के लिये ही रामदास काछी ने अपना नाम बदल कर रेमडस रख लिया। यह काछी से ईसाई क्यों हुआ इसकी विचित्र कथा है। रामदास का बाप जहाँ अपना खेत जोतता बोता था वहीं एक ईसाई प्रचारक का बँगला था। रामदास खेलते २ उस बँगले में जाया करता था। ईसाई प्रचारक और उसकी मेम दोनों बच्चों को बहुत प्यार करते थे। रामदास को वे अपने बराबर

कुर्सी पर बैठाते थे और अपने साथ उसे खिलाते थे। रामदास के पड़ोस में एक पंडित जी का भी घर था। पंडित जी उसे अपने पास बैठाने से धर्म की हानि समझते थे। उसका छुआ पानी पीने में भी संकोच करते थे। पंडित के इस तिरस्कार और ईसाई साहब के प्रेम पूर्ण व्यवहार से बचपन से रामदास हिन्दू धर्म से घृणा करने लगा। ज्यों ज्यों वह बड़ा होता गया उसका यह घृणा भाव भी बढ़ता गया। अन्त में एक दिन वह साहब के पास जा कर बोला—"मुझे ईसाई बना लीजिये?" जब साहब ने पूछा, "क्यों?" तो उसने जवाब दिया, 'मुझे हिन्दू धर्म से घृणा होगई है?" बस वह ईसाई हो गया। किसी किसी का यह भी कहना है कि साहब के एक लड़की थी जिससे रामदास का प्रेम होगया था इसीसे वह ईसाई होगया। पर हमारा खयाल है यह बाद का कारण है। क्योंकि उसके ईसाई होने के आठ दस साल बाद साहब की लड़की के साथ उसका ब्याह हुआ था और वह ब्याह भी लड़की की इच्छा के विरुद्ध साहब और मेम साहब ने किया था। इस घटना से रामदास के माँ बाप रो रो कर मर गये और वह स्वच्छन्दता पूर्वक मिस्टर रैमडस हो कर साहब के बँगले में रहने लगा। इसी अवस्था में उसे अँग्रेजी और बाइबिल आदि की अच्छी शिक्षा दी गई। अब वह कट्टर ईसाई है। साहब और उसकी मेम के मरने के बाद रामदास उनके बँगले का मालिक ही नहीं हुआ उनके स्थान पर ईसाई धर्म प्रचारक भी नियत

हुआ और उसे अच्छी तन्ख्वाह भी मिलने लगी। साहब की योग्य और सुशीला पुत्री मिसेज़ रैमडस के नाम से विख्यात हुई। इस पुत्री का ब्याह एक अधगोरे ईसाई से होने वाला था। उसके साथ इसका प्रेम भी था। पर माँ बाप ने उसके विशेष शराबी होने के कारण यह सम्बन्ध नहीं होने दिया। परिणाम यह हुआ कि उस अधगोरे ने अभी तक अपना ब्याह नहीं किया और कभी कभी आकर मिस्टर रैमडस के सुख में खलल डालता है। इधर जबसे चन्द्रकला आई है उसका झुकाव मिसेज़ रैमडस के बजाय उसकी तरफ हो गया है और वह चन्द्रकला को अपनी पत्नी बनाने के प्रयत्न में है। मिस्टर रैमडस भी चाहते हैं कि यह सम्बन्ध हो जाय ताकि उसकी जान बचे।

इसी सम्बन्ध में आज मिस्टर और मिसेज़ रैमडस में खूब गर्मागर्म बातें हो रही हैं। बङ्गले के बाहर के हिस्से में एक बरामदे में मिसेज़ रैमडस एक आराम कुर्सी पर लेटी हैं और मिस्टर रैमडस इधर उधर टहल रहे हैं। उनके पाँव रखने के ढंग से जान पड़ता है कि आज वे जितने उत्तेजित होरहे हैं उतने कभी नहीं हुए। उनकी ओर प्रेमभरी चितवन से देखती हुई मिसेज़ रैमडस बोली—"प्यारे आज तुमको क्या होगया है?"

"मैंने बचपन में सुना था कि औरतें मर जाने पर चुड़ैल बनती हैं पर तुम जीवित अवस्था में ही चुड़ैल बनकर मुझे

सता रही हो।" मिस्टर रैमडस ने बगल में पड़ी हुई कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

"ऐसी अप्रिय बात तो तुम कभी नहीं बोलते थे स्वामी?"

"इस पर भी तो मेरा तुमने कभी खयाल नहीं किया?"

"क्या खयाल नहीं किया?"

"मैंने तुमसे कितनी बार कहा कि उस दोगले जैक से कुछ मतलब न रखो, पर तुम मानती हो?"

"जैक मेरा पुराना प्रेमी है, जब हमारे तुम्हारे ब्याह की चर्चा भी नहीं थी तभी वह मुझे और मैं उसे प्यार करने लगी थी। मैं खुद उसके यहाँ नहीं जाती हूं पर यदि वह मेरे घर आए तो उसे मैं मने भी तो नहीं कर सकती हूँ।"

"तो तुम मुझे तलाक देकर उसके साथ ब्याह कर लो।"

"और भी कितने ही पुरुष मेरे घर आते हैं मुझसे खूब बात करते हैं उनसे तुम क्यों नहीं चिढ़ते हो। केवल जैक पर तुम्हारा यह क्रोध क्यों है?"

"और लोग मिसेज रैमडस के पास आते हैं जैक अपनी प्रेमिका के पास आता है।"

"तुम्हारे पास उसे ऐसा इलजाम लगाने का कोई सबूत नहीं है।"

बहुत सी बातें ऐसी हैं जिनके लिए सबूत नहीं दिया जा सकता।"

"नहीं प्यारे तुम गलती पर हो ? जैक बिलकुल बेकसूर है ।"

हाँ तुम तो यह कहोगी ही । इसका पता तो तब चलेगा जब कोई स्त्री मेरे पास आने लगे ।"

"सच कहती हूं मैं बड़ी खुश होऊंगी ।" कहते हुए मिसेज रैमडस उठकर खड़ी हो गईं ।

"कहाँ जाती हो ?" रैमडस ने पूछा ।

"मिस चन्दा के पास ?"

"मिस चन्दा को भी तो जैक घूरने लगा है ? मैं तो उस बदमाश को यहां नहीं आने देना चाहता ।"

"मिस चन्दा को जैक उतना नहीं घूरता जितना तुम्हारे अन्य मित्र घूरते हैं ।"

"एक समय में मुझे हिन्दू धर्म से घृणा हो गई थी । अब उससे प्रेम हो रहा है और मेरा हृदय कहता है कि मैंने हिन्दू-धर्म छोड़ कर महान भूल की है ?"

"क्यों ?"

"क्योंकि अगर मैं हिन्दू होता तो तुम मेरी पत्नी होकर बिना मेरी इजाज़त किसी अन्य पुरुष से बातें नहीं कर सकती थीं ?"

"पर क्या यह स्त्री-जाति पर तुम्हारा अत्याचार न होता ?"

"हरगिज़ नहीं स्त्री पर पूर्ण शासन रखने में ही दम्पति की भलाई है ।"

"अच्छा है, कुछ दिन हिन्दू होकर इसका भी तजुर्बा कर लो ।"

"तुम्हारे जैक का विवाह हो जाय तो मैं जो हूं वही बना रहूँगा ।"

"जैक अपना ब्याह नहीं करेगा ?"

"मिसचन्दा के साथ कर लेगा ।"

"लेकिन मिसचन्दा ने अभी तक ईसाई धर्म ग्रहण नहीं किया ? क्या तुम्हें यह मालूम नहीं है ।"

"खान पान वेश भूषा आदि सब में तो वह ईसाईहोगई है । केवल बपतिस्मा देना बाकी है ।"

"धर्म का सम्बन्ध भोजन और पोशाक से नहीं है, हृदय से है । प्यारे माफ करना, अगर मैं कहूँ कि तुम में हिन्दू संस्कार अभी तक बने हैं ।"

"हो सकता है, पर मिसचन्दा अगर हमारे बंगले में रहना चाहती है तो उसे शीघ्र ईसाई धर्म ग्रहण करना पड़ेगा ।"

"जानते हो उसकी पोशाक बदलने में मुझे कितनी मेहनत करनी पड़ी है । जबरदस्ती और मुख चूम चूम कर उसे मैंने अंग्रेजी पोशाक पहनाई है ।"

"इसी प्रकार उसका धर्म भी बदल दो ।"

"उसके धर्म के साथ बलात्कार करूंगी तो वह यह पोशाक

भी उतार फेकेगी। अभी जल्दी नहीं करना चाहिये। धीरे धीरे सब काम हो जायगा।"

"जैक से कहो मिसचन्दा को अपने साथ ब्याह करने के लिए राजी करे।"

"मैंने उससे कहा है। पर मुश्किल तो यह है कि जब वह मिसचन्दा की तरफ घूरता है तब भी तो तुम्हें क्रोध आता है।"

"अच्छा अब क्रोध नहीं करूंगा। पर कोशिश करो कि शीघ्र यह बला टल जाय। चन्दा को पाकर जैक तुम्हारे पास नहीं आएगा। उसका यही उपहार मेरे लिए मोक्ष के बराबर होगा। और चन्दा! भोली चन्दा। उसका मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगा। वह यहाँ न आती तो जैक साँप बनकर हमारे तुम्हारे बीच में फुफकारता रहता।"

मिसेज रैमडस ने मुस्कराते हुए कहा-"तुमने चन्दा का उद्धार किया है उसके बदले में चन्दा को तुम्हारा उद्धार करना ही चाहिये। पर मेरा खयाल है वह इतनी कृतज्ञ न निकलेगी।"

मिस्टर रैमडस ने पत्नी के पास आकर कहा—"प्यारी तुम चाहोगी तो सब हो जायगा।"

पति के हाथों को अपने हाथों में लेकर मिसेज रैमडस ने कहा—"पहिले प्रतिज्ञा करो कि कोई अप्रिय बात नहीं कहोगे।"

पत्नी के मुख पर एक हलका सा चुम्बन देते हुए रैमडस ने कहा—"कहूँगा तो रहूँगा कहाँ।"

सत्रहवां परिच्छेद

ईसाई धर्म

चिड़ियों की चहक, फलों की महक, मन्द हवा के झोंके, पत्तियों का नृत्य और प्रातःकाल का स्वच्छ प्रकाश सब एक साथ मिल कर बिस्तर से उठे हुए मानवों को नाना प्रकार के इशारों द्वारा उपवन की सैर करने को बुला रहे थे। मिस्टर रैमडस के करीब आधे दरजन कच्चे बच्चे चन्द्रकला को चारों तरफ से घेर कर खड़े होगये थे और शोर मचा रहे थे कि चलो सैर को चलें, आज बड़ी देर हो रही है। चन्द्रकला अपनी टहलने की पोशाक पहन चुकी थी और एक बड़े दर्पण के सामने खड़ी होकर अपनी हैट ठीक कर रही थी। एकाएक उसे न जाने क्या खयाल आया कि वह बड़ी उदास हो गई, उसके हाथ से हैट गिर गया। वह मन ही मन कहने लगी—"आह! अब मेरे ईसाई होने में क्या फरक रहा। ईसाइयों की पोशाक मैं पहनती हूं। ईसाई के घर में मैं रहती हूं। भोजन जरूर अपने हाथ से मैं प्रथक बनाती हूं पर उसे बच्चे छू ही देते हैं। हाय! जो काम अबदुल्ला जबरदस्ती नहीं कर सका, शास्त्री जी पस्त हिम्मत हो गये, वही जान पड़ता है मिसेज़

रैमडस अपनी चिकनी चुपड़ी बातों के जोर से कर लेंगी। जिस प्रकार उन्होंने मुझे हैट पहना दिया, उसी प्रकार! अगर वे किसी ईसाई के साथ मेरा ब्याह करने लगेंगी तो मैं क्या कर लूंगी? बड़ी विपत्ति में फँस गई हूं। मुझे सब लोग मिसचन्दा कहते हैं, इसका मतलब हुआ कि मैं अभी कुमारी हूं। कितना धोखा है। बातों ही बातों में मेरा सिन्दूर मिट गया, मेरे हाथ से चूड़ियां दूर कर दी गई। एक प्रकार से मैं विधवा बना दी गई। अ ह! मैंने क्यों यह सब होजाने दिया। ये लोग ईसाई हैं। इसी प्रकार सब को ईसाई बना लेते हैं। हाय क्या करूँ। पर इनके साथ न आती तो क्या मुझे ये जबरदस्ती लाते। काशी विश्वनाथ की गली में जहां कोई हिन्दू मुझे आश्रय नहीं दे सका मिसेज रैमडस की मुझसे मुलाकात हुई। माता के समान प्यार भरे बचनों से उन्होंने मुझे मोहित कर लिया। मैं उनके साथ चली आई, न आती तो कहां जाती? इसमें सन्देह नहीं कि वे बेटी के समान मुझे रख रही हैं पर यदि मैं ईसाई न बनूँ तो शायद मुझे वे अपने घर से निकाल देंगी। तब मैं कहाँ जाऊँगी? हा! स्वामी! क्या तुम मुझे भूल गये? पूरा एक वर्ष होगया? क्या अब तक तुमको जीविका का कोई साधन नहीं मिला? मिला होगा! तुमने मुझे खोजा होगा। पर मुझे पाओ कैसे? मैं तो यहाँ हिन्दू बस्ती से दूर ईसाई परिवार में मौज कर रही हूं। मैंने अपनी पोशाक भी बदल ली है। अब तो तुम मुझे पहचान ही नहीं सकोगे, तुम्हारा

दोष नहीं है। मैं अतभागिनी हूं। अपने हाथों अपना सर्वनाश कर रही हूँ। अफसोस!"

चन्द्रकला का इस प्रकार खड़े सोचते रहना लड़कों के लिए असह्य होगया। वे उसका हैट उठा कर बाग की तरफ इस खयाल से चल पड़े कि हैट लेने की गरज से वह उनकी तरफ दौड़ेगी तब वे कहेंगे जल्दी चलो तो हैट दें, नहीं तो नहीं देंगे। पर चन्द्रकला को हैट का ध्यान एक दम जाता रहा। वह वहीं एक कुर्सी पर बैठ गई। लाचार होकर लड़के फिर वापस आगये। इसी समय मिसेज रैमडस ने उस स्थान पर आकर कहा--"बालको! आज चन्द्रकला तुम्हारे साथ सैर को नहीं जा सकेगी। तुम सब जाओ।"

लड़कों के चले जाने के बाद मिसेज रैमडस ने कहा-बेटी बाहर के बरामदे में आओ, कुछ जरूरी बातें करनी हैं।

बरामदे में मिस्टर रैमडस इधर उधर टहल रहे थे। चन्द्रकला को देखते ही बोले --"अब तो यह बिलकुल ईसाई जान पड़ती है, बपतिस्मा ले चाहे नहीं।"

चन्द्रकला ने तिरस्कार पूर्ण दृष्टि से उनकी तरफ देखते हुए कहा --आप अपने बाग के माली को, पंखा कुली को, धोबी को, सईस को, ईसाई बनाने का उद्योग क्यों नहीं करते? मेरे ही पीछे क्यों पड़े हैं।

मिस्टर रैमडस--वे हमारे आश्रम में नहीं मेहनत करते हैं, चले जाते हैं।

चन्द्रकला—मुझे भी कोई काम बता दीजिये करूंगी और आपकी सेवा में पड़ी रहूँगी।

मिस्टर रेमडस तुम्हारे लिये यही काम है कि तुम शीघ्र ही इसाई हो जाओ।

चन्द्रकला—और न होऊंगी तो।

मिस्टर रैमडस—होओगी क्यों नहीं। जानती हो तुम्हारे ऊपर कितना रुपया खर्च किया है?

चन्द्रकला—पर पहले तो आपने मुझसे यह सब नहीं कहा।

रैमडस—यह तो तुम्हें खुद समझना चाहिये था कि ईसाई प्रचारक के पास जब तुम आई हो तो इसका यही मतलब है कि एक न एक दिन तुम ईसाई मत ग्रहण कर लोगी।

चन्द्रकला—यह तो न होगा।

रैमडस—ईसाई धर्म बड़ा उदार है। इसमें प्रेम है, अहिंसा है, सत्य है, न्याय है, दया है।

चन्द्रकला—मुझे तो आपके कथन का बिलकुल उलटा जान पड़ता है। अगर यह धर्म उदार होता तो मुझ हिन्दू को अपने आश्रम में रखकर गर्वित होता। इसमें प्रेम होता तो हिन्दू होने पर भी तुम मुझे स्नेह की दृष्टि से देखते। इसमें अहिंसा होती तो तुम मुझसे ऐसी बातें न कहते जिन्हें सुन कर मेरे जी को दुख होता है। इसमें सत्य होता तो यह स्वयं मेरे दिल में घर कर लेता। इसमें न्याय होता तो तुम असहाय अवस्था में मुझसे

ईसाई होने के लिये न कहते। इसमें दया होती तो मेरे ऊपर तुमने जो रुपये खर्च किये हैं उसे तुम अपना धर्म समझते।

रैमडस—यह तो तुम्हें तब पता चलेगा जब तुम ईसाई धर्म ग्रहण कर लोगी।

चन्द्रकला—जब यह धर्म किसी गैर ईसाई की सहायता केवल इसलिये करता कि वह ईसाई हो जाय तो मैं इसे उदार धर्म नहीं कह सकती हूं। एक हिन्दू विपत्ति में फसे हुए ईसाई या मुसलमान सब की सहायता करेगा पर वह उससे यह न चाहेगा कि हिन्दू हो जाय।

रैमडस—जब हिन्दू धर्म इतना उदार है तो उसने तुम्हारी सहायता क्यों नहीं की।

चन्द्रकला—ना समझी से।

रैमडस—ईसाई पति तुम्हें इस प्रकार कभी न छोड़ता।

पति का स्मरण आते ही चन्द्रकला कुछ उत्तेजित होगई। उसने कहा—ईसाई पति मुझे तलाक दे देता या मैं ही उसे तलाक दे सकती थी। पर मेरे हिन्दू स्वामी मुझे तलाक न देंगे इस लोक में न मिलगे तो उस लोक में मुझे जरूर मिलेंगे।

रैमडस—इन्हीं सब विचारों के कारण हिन्दू स्त्रियाँ सदैव सताई जाती हैं।

चन्द्रकला—मैं मानती हूँ कि हिन्दू स्त्रियों का जीवन बड़े संकट में है पर यह धर्म का दोष नहीं है समाज का है।

रैमडस—ऐसे अत्याचारी समाज में रहने से क्या लाभ?

चन्द्रकला—इसी लिये तो मैं समाज से अलग होगई हूँ।

रैमडस—अलग नहीं हुई हो, अलग करदी गई हो।

चन्द्रकला—नहीं समाज में रहने पाती तो भी मैं अपने पति की आज्ञा से या तो उसे अपने अनुकूल बनाती या उससे अलग हो जाती।

रैमडस—पति आज्ञा न देता तो।

चन्द्रकला—तो जैसा वह कहता वैसा करती। मरने कहता मर जाती, जीने कहता जीती।

यह बात सुनकर रैमडस को अपना ध्यान हो आया। उसने एक ठंढी सांस ली और कहा—"मिसचन्दा तुम वास्तव में आदर्श पत्नी हो। तुमको खोकर तुम्हारे पतिने सारा संसार खो दिया।"

लड़के बहुत दूर निकल गये थे। मिसेज रैमडस ने कहा ये बातें आज खतम होने की नहीं हैं। बेटी बाग में जा, तेरे बिना लड़के दुःखी हो रहे होंगे।

चन्द्रकला बाग में चली गई। मिसेज रैमडस ने पति से कहा—"इस प्रकार यह ईसाई न होगी। इसके हृदय में इसके पति का प्रेम लबालब भरा है। जब तक उसके स्थान पर कोई ईसाई युवक न आवेगा तब तक यह काम मुश्किल है।

रैमडस—तो फिर क्या किया जाय?

मिसेज रैमडस—विवाहर्थी ईसाई युवकों को मौका दो कि इसके पास आवें और इससे प्रेम की भिक्षा मांगे। सम्भव है किसी का जादू इस पर चल जाय।

रैमडस—उसी दम बँगले से बाहर निकल गये मानों वे किसी ईसाई युवक की तलाश में गये हों पर बँगले के बाहर ही उन्हें उनकी व्यथा बढ़ानेवाले अधगोरे जैक का दर्शन मिला। उनका खून खौल उठा पर अपने भावों को दबाते हुए उन्होंने कहा—"जैक यहा से किसी दूसरे शहर में चले जाने की प्रतिज्ञा करो तो तुम्हारा विवाह मिस चन्दा के साथ व्याह करादूं।

जैक—मैं आप का कृपापात्र नहीं होना चाहता।

रैमडस—मिसेज रैमडस के कृपा पात्र बनोगे?

जैक—उनका प्रेमपात्र हूँ कृपापात्र बनने को क्या हुआ?

रैमडस—वे कहें तो मिस चन्दा से व्याह करोगे?

जैक—नहीं।

रैमडस—तुम मिस चन्दा को बड़े गौर से क्यों देखा करते हो?

जैक—इस लिये कि इस उम्र में मेरी लवली भी इसी प्रकार दिखाई पड़ती थी।

लवली वह मिसेज रैमडस को कहता था। मिस्टर रैमडस चुप हो रहे। थोड़ी देर में बोले—"जैक क्या तुम चाहते हो कि मैं मर जाऊँ।"

जैक—हाँ

रैमडस—क्यों

जैक—तुम्हारे मर जाने से मेरी लवली मुझे मिल जायगी।

रैमडस—क्या मिसेज रमडस भी यह चाहती हैं?

जैक—ओह ! वे चाहती तो यह काम सरल हो जाता। तुम्हें मैं एक दिन में जहन्नुम भेज देता।

रैमडस—बस आज से तुम हमारे बंगले पर मत आया करो।

जैक—यदि मिसेज रैं उस कह देंगी तो नहीं आऊँगा।

"अच्छी बात" कहते हुए रैमडस फिर तेजी से बँगले की ओर चले गये। उन्होंने निश्चय किया कि अब मैं मिसेज़ रैमडस को तलाक दे दूँगा। इसके बिना मेरा जीवन सुखमय न होगा। और पति की परम आज्ञाकारिणी मिस चन्दा से व्याह करूँगा। वह मिसेज रैमडस होकर इस बँगले में रहेगी। वह मेरे कहने से जियेगी, मेरे कहने से मरेगी, जैक ले जाय अपनी लवली को। मुझे मेरी प्राणेश्वरी मिल गई।

इस बार प्रसन्नता से रैमडस की आँखे चमक रहीं थीं। मिसेज रैमडस ने पूछा—कोई मिल गया क्या ?

"हाँ ?"

"कौन ?"

"मैं स्वयं अपने आपको खोज लाया हूं।"

गुस्से से मिसेज रैमडस की आँखें लाल होगईं। मिस्टर रैमडस सिटपिटा गये। उन्होंने चिल्लाकर कहा—जैक आओ ! मुझे मार डालो। जीते जी तो अपनी पत्नी के साथ तुम्हें मैं देख नहीं सकूँगा।

अठारहवां परिच्छेद

—— :o: ——

पंडित पुत्री का पतन

किसी नेता का जन समूह पर तभी तक प्रभाव रहता है जब तक उसके अवगुण छिपे रहते हैं। अवगुणों के प्रगट होने पर वह अपना नेतृत्व ही नहीं खो बैठता बल्कि जन समूह में उसका रहना मुश्किल हो जाता है। उसके इशारों पर नाचने वाले लोग सब तरह से उसका अपमान करने पर उतारू हो जाते हैं। पंडित सुधानिधि शास्त्री की भी यही दशा हुई। चन्द्रकला के साथ उन्होंने जो अमानुषिक बर्ताव किया उसकी चर्चा गली गली होने लगी। जो उनका पर छूते थे वे उनसे मुँह फेर कर चलने लगे। भङ्गी ने उनका पाखाना साफ करने से इन्कार कर दिया, नाई ने उनका बाल बनाना बन्द कर दिया, धोबी उनके कपड़ों से घृणा करने लगा। नौकर चाकर दूनी तन्ख्वाह पर भी उनके यहां रहने पर राजी न हुए। पुजारियों ने विश्वनाथ के मन्दिर में उनका घुसना रोक दिया। यही नहीं, इस बात की भी कोशिश होने लगी कि काशी से उनको निकाल दिया जाय। जिस घर में वे रहते हैं वह गङ्गा का मन्दिर है, उसमें फिर गङ्गा की मूर्ति

स्थापित की जाय। ऐसे पवित्र स्थान में उनका रहने देना ठीक नहीं है।

अब उनसे सहानुभूति रखने वाला, उनसे प्रेम से दो शब्द बोलने वाला घर से बाहर कोई न था। जिस पत्नी को वे चरणों की दासी समझते थे, अब उसकी कीमत मालूम हुई। पुत्री को मानों विधाता ने इसीलिए विधवा बना दिया था कि वह विपत्ति काल में उनसे दो मीठी बातें बोलेगी, उनके पास रहकर उन्हें सान्त्वना देगी। वे अपनी पत्नी और पुत्री का खूब आदर करने लगे, उन्हें अच्छे अच्छे कपड़े और आभूषण लाने लगे। पर माँ बेटी उनके इस व्यवहार से संतुष्ट नहीं हुई। वे जानती थीं कि बाहर के लोगों से तिरस्कृत होने के कारण ही शास्त्री जी उनका आदर कर रहे हैं। आदर लेकर अब वे क्या करेंगी। वस्त्र आभूषण पहन कर कहां जायँगी, किसे दिखाएंगी। संसार के दरवाजे शास्त्री जी के अनाचार के कारण उनके लिये बन्द हैं।

एक रोग में सैकड़ो रोग उत्पन्न हो जाते हैं। एक मुसीबत में सैकड़ो मुसीबतें आ पड़ती हैं। जनसमाज के तिरस्कार का दावानल तो था ही अब शास्त्री जी पर एक मुकदमा भी चलने लगा कि गङ्गा का मन्दिर बेजा तरीके से दखल कर उन्होंने घर बना लिया है। सरकार इसकी जांच करे और मन्दिर के स्थान पर फिर मन्दिर बनवाए।

शास्त्री जी अधीर हो उठे पर विपत्ति में धीरज रखने वाली स्त्री ने कहा—स्वामी, घबड़ाओ मत, कोई वकील मुख्तार ठीक कर मुकदमे की पैरवी करो।

शास्त्री जी—बनारस में ऐसा कोई वकील या मुख्तार नहीं है जो मेरा मुकद्मा अपने हाथ में ले सके। मुझ पर विधाता वाम होगया है।

स्त्री—बाहर से कोई वकील बुलाओ।

डूबते को मानों तिनके का सहारा मिला। इलाहाबाद के नामी वकील मोहनदास को ५००) का चेक भेज कर शास्त्री जी ने लिखा—"शीघ्र आइये। बड़ा आवश्यक काम है।" मोहनदास ने जवाब भेजा—"अस्वस्थ हूँ। मेरा लड़का सुखबिलास जाता है। यह बड़ा योग्य बैरिस्टर है। तुम्हारा काम मुझसे अच्छा करेगा।"

सुखबिलास को पाकर जीवन सागर में डूबते हुए शास्त्री जी मानों जमीन पागए। जिस कमरे में विपत्ति दाहिनी चन्द्रकला को आश्रय दिया गया था उसी में विपत्ति विनाशक सुखबिलास को ठहराया गया। घर में कोई नौकर चाकर नहीं थे। इसलिये माँ बेटी को सुखबिलास की उसी प्रकार खातिरदारी करने की आज्ञा हुई। एक विलायत से लौटे हुए बैरिस्टर के सामने शास्त्री जी ने स्त्रियों का परदा कराना उचित नहीं समझा। दूसरे धर्मान्धता दिखाने का

अवसर भी नहीं था। धर्मान्ध समाज से ही तो उनका युद्ध चल रहा था। उन्होंने सुखबिलास से कहा—"बैरिस्टर साहब, काशी के पंडित मुझसे जलते हैं क्योंकि देश विदेश सर्वत्र मेरा बड़ा नाम है। विद्या बुद्धि में मेरा मुकाबला न कर सकने के कारण वे मुझपर नाना प्रकार के लाँछण लगाते हैं और इस प्रकार मुझे बदनाम करना चाहते हैं। यह मेरा घर मेरे बाबा के आगे से है। मेरे बाबा का नाम गङ्गाराम था। उन्हीं के नाम पर इस घर का नाम गङ्गामन्दिर पड़ा। यही आपको साबित करना है।"

सुखबिलास कभी इलाहाबाद और कभी बनारस रहने लगा। वह एक मधुरभाषी और सुन्दर युवक था, स्त्रियों से किस प्रकार बातें करनी चाहिये, नवयौवना कुमारियों को उनकी माताओं के सहित अपने पर किस प्रकार अनुरक्त करना चाहिए यह वह विलायत में सीख चुका था। शास्त्री जी की विधवा पुत्री एक पके फल के समान थी। जो हाथ बढ़ाता उसी के हाथ में आजाती। फिर सुखबिलास तो एक चतुर प्रेमी था। उसने उसके हृदय पर अधिकार कर लिया। अज्ञान विधवा ने मन ही मन अपने आप को उसे सौंप दिया। जब तक सुखबिलास बनारस में रहता दोनों के दिन बड़े चैन से कटते। उसके बनारस से जाते ही दोनों बेचैन हो उठते। धीरे धीरे यौवन की मदिरा से मतवाले हुए ये दोनों प्राणी धर्म, समाज, लाज सबको भूल गये। जब माँ भोजन

बनाने चली जाती तो सुखबिलास और यह तरुण विधवा दोनों पास पास बैठ कर तरह तरह की बातें करते। इन्हीं बातों में वह शैतान छिपा हुआ था जो कितने ही युवक युवतियों को एकान्त में पाने पर पाप के गड्ढे में ढकेल देता है।

सुखबिलास ने जी जान से पैरवी की। परिणाम यह हुआ कि शास्त्री जी मुकदमा जीत गये। इस जीत से कुछ विपक्षी भी उनके पक्ष में आगये।

जीत की खुशी में जब चारों तरफ खूब चहल पहल और रोशनी होरही थी सुखबिलास प्रयाग जाने की तयारी कर रहा था। शास्त्री जी की पुत्री जिसे वह नगीना कहता था उसके पास बैठी हुई आँसू बहा रही थी।

सुखबिलास ने कहा—नगीना अब बिदा दो।

नगीना बोली—मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी, तुम्हारा वियोग मैं सह नहीं सकूँगी।

सुखबिलास—मैं यहाँ कभी कभी आकर तुमसे मिल जाया करूँगा। प्रयाग में मैं तुम्हें कहाँ रखूँगा, पिता जी घर में तुम्हें न रखने देंगे।

नगीना—बस अब कभी भेंट न होगी। देख लेना! अब मैं फिर पर्दे में हमेशा के लिए बन्द कर दी जाऊँगी। मैं तुम्हारी हो चुकी हूँ मुझे अपने साथ ले चलो।

सुखबिलास ने गम्भीरता पूर्वक थोड़ी देर विचार कर

कहा—प्रयाग में मेरे जान पहचान की एक वेश्या है। उसके साथ रहना पसन्द करो तो चल सकती हो।

वेश्या का नाम सुन कर नगीना के रोंगटे खड़े हो गये पर अपने पिता से और नीरस घर से उसे बड़ी घृणा होगई थी इसलिए उसने कहा—मैं तुम्हारी हो चुकी हूं। तुम मुझे नरक में भी रहने कहोगे तो रहूंगी।

सुखबिलास ने नगीना को खींच कर हृदय से लगा लिया। और कहा—चलो, जल्दी तयार हो।

अब नगीना को चन्द्रकला की बात याद आई जब उसने कहा था कि धैर्य्य रखो तुम्हारे दिन लौटेंगे। मानो चन्द्रकला ने ही उसके दिन लौटाए हैं। वह मनही मन परिस्थिति और स्थान की आड़ में छिपी हुई चन्द्रकला को सम्बोधित करके कहने लगी—"हे असहाय पतिव्रते! जहाँ भी तुम हो, मेरे पास आ जाओ। मैं तुम्हारी सहायता करूँगी। अपना सतीत्व नष्ट करके तुम्हारा सतीत्व बचाऊंगी।"

चन्द्रकला मौजूद नहीं थी। पर वह स्थान जहाँ उसने शास्त्री जी को घायल किया था अपनी नीरव वाणी में कहता सा जान पड़ता था—सतीत्व की रक्षा किसी की सहायता से नहीं हो सकती! फिर जिसने अपना सतीत्व खो दिया वह तो कभी भी दूसरे के सतीत्व की हिफाजत नहीं कर सकती।

उस स्थान को देख कर नगीना कुछ भयभीत हुई। अक्षर

में मुंह छिपाकर उसने कहा—मैं तुम्हारे साथ न चलूंगी, मुझे बड़ा डर लगता है।

सुखबिलास ने नगीना का हाथ पकड़ कर कहा—चलोगी कैसे नहीं, अब तुम मेरी हो। मैं जो कहूँगा वह तुम्हें करना पड़ेगा।

सुखबिलास कमरे से बाहर हुआ। नगीना मंत्र मुग्ध सर्प की तरह उसके पीछे चली। चारों तरफ़ जगमग हो रहा था, शोरगुल हो रहा था पर नगीना को किसी ने घर से बाहर जाते न देखा। वह उस मकान से ऐसे निकल गई जैसे शरीर से प्राण निकल जाता है। उसे चहल पहल रुदन सा मालूम हो रहा था और मकान की रोशनी ऐसी जान पड़ रही थी जैसे कोई चिता जल रही हो।

उन्नीसवां परिच्छेद

जनाने महल में

ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे और श्यामा से घनिष्टता बढ़ने लगी श्यामसुन्दर को चन्द्रकला भूलती गई। पहले तो मोहनदास ने दो एक दासियाँ बनारस भेजीं पर जब परिणाम कुछ न निकला तो चन्द्रकला के खोजने का काम बन्द कर दिया गया। बाद को श्यामसुन्दर भी उसके खोजने आदि के सम्बन्ध में खामोश हो गया। श्यामसुन्दर के कमरे में टँगी हुई चन्द्रकला की तस्वीर पर गर्द जम गई, आलमारी में रखे हुए उसके लंहगे को झींगुरों ने चाट डाला। साल भर पहले जिस चन्द्रकला के लिए श्यामसुन्दर दूसरे लोक में जाने को तयार थे उसीको अब वे एक दम भूल गये। अब उसका बिरह उन्हें नहीं सताता। छोटे त्याग के बाद मनुष्य को बड़ी चीज़ मिलती है। कौन जाने चन्द्रकला को विधाता ने उनकी आँखों से इसीलिए शायद ओझल कर दिया हो कि उन्हें श्यामा मिले। वह मूर्ख थी, यह बी० ए० पास है। वह जोड़ी अच्छी नहीं थी, यह सुन्दर जोड़ी है। इस प्रकार श्यामसुन्दर अपना दिल बहलाने और समय व्यतीत करने लगे। अब भी चन्द्रकला को वे याद कर लेते हैं पर एक प्रेमी की हैसियत से

याद करते हैं। वे चाहते हैं कि वह जहां रहे सुख से रहे। अब वे उसे एक आश्रिता और आश्रयदाता की हैसियत से नहीं। कहाँ क्षण भर की मुलाकात और कहाँ रोज रोज का साथ। ऐसी दशा में बेचारी चन्द्रकला को वे कभी कभी स्मरण कर लें यही उसके लिए बहुत है।

कभी कभी अकेले होने पर श्यामसुन्दर अपने दिल में सोचते कि उनकी पत्नी चन्द्रकला न जाने कहाँ मारी मारी फिर रही होगी। ऐसी दशा में उनका श्यामा के साथ हंसी दिल्लगी में सुख से समय बिताना ठीक नहीं है। श्यामा को उन्हें भूल जाना चाहिए। जब तक यह न मालूम हो जाय कि चन्द्रकला इस लोक में नहीं है तब तक उनका श्यामा के साथ स्नेह रखना उचित नहीं है। श्यामा को उन्हें भूल ही जाना होगा। ऐसा ख़्याल आते ही उन्हें बड़ी वेदना होती और वे गुनगुनाने लगते—

वह चितवनि वह सुन्दर कपोल द्युति
वह दशनन छवि बिज्जु की धरति है।
वह ओठ लाली वह नासिका सकोरनि में
वह हाव भाव कै यों कौतुक करति है॥
कहै मनीराम छबि बरण सकै को वह
रति ते सरस मन मुनि को हरति है।
वह मुसकानि युग भौंहन कमान द्युति
वह बतरानि न बिसारी बिसराति है॥

ठीक ही है। श्यामा भुलायी नहीं जा सकती। ऐसे अवसरों पर यदि कहीं श्यामा आ उपस्थित होती तब तो श्यामसुन्दर के ये विचार एक दम हवा हो जाते और वे मन ही मन कहने लगते—जी चाहता है कि इस पृथ्वी की परी पर हजारों चन्द्रकलाएँ निछावर कर दूं।

इस तरह अब उनके दिन बड़े मजे में बीत रहे हैं। पर इससे पाठकों को यह न समझना चाहिए कि अब मोहन मन्दिर में कोई दुःखी प्राणी रहा ही नहीं है। जितना दुःखी श्यामसुन्दर था उससे भी अधिक दुःखी अब रानी रहती है। क्योंकि उसके पति की शराब पीने की और वेश्यागमन की आदत दिनों दिन बढ़ती जा रही है। यह दोनों आदतें वे विलायत से ही लाए हैं। रानी इस चिन्ता में चूर रहती है। रानी के साथ कभी कभी श्यामा को भी इसके लिये चिन्तित होना पड़ता है। और जब श्यामा चिन्तित होती है तो श्यामसुन्दर पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। मोहनदास को अभी इन बातों का कुछ पता नहीं है। ये बातें पहले पहले बंगले के एक नौकर को मालूम हुईं, उसने अपनी स्त्री से कहा। उसकी स्त्री ने रानी से वाह वाही लूटी। इस प्रकार यह बात श्यामा और श्यामसुन्दर तक पहुंची।

रानी के दुःख से दुखी होकर श्यामा कह उठती—"पुरुष बड़े कृतघ्न होते हैं। विवाह के समय की गई पवित्र प्रतिज्ञाओं का वे बिल्कुल खयाल नहीं रखते। इस पर श्यामसुन्दर जवाब

देता कि नहीं स्त्रियाँ अधिक कृतघ्न होती हैं इस तरह बड़ा वादविवाद खड़ा हो जाता कभी २ रानी भी इन विवादों में शामिल होती।

एक दिन की बात है प्रातः काल रानी अपने पलंग पर पड़ी २ सिसक रही थी कि अचानक श्यामा वहाँ पहुँच गई। श्यामा को देख रानी उठकर बैठ गई और मुस्कराने की चेष्टा करने लगी पर वह मुस्करा न सकी प्रत्युत उसकी आँखों से और भी आँसू उमड़ पड़े श्यामा ने कहा—"तुम्हें क्या दुःख है रानी, जान पड़ता है रात भर जगती और रोती रही हो। हाय! तुम्हारी आँखें तो लाल! सुर्ख हो रही है। इस तरह तो तुम मर जाओगी।"

"नहीं मैं मरूंगी नहीं, श्याम! विधाता ने मुझे रोने के लिये बनाया है।" रानी श्यामा को प्यार से श्याम कहा करती थी।

"यहाँ तो तुम्हें किसी बात का दुख न होना चाहिए?"

"हाँ, अनाथालय की लड़कियों को ऐसे महलों में आने का सौभाग्य नहीं होता। इसलिए ससुर जी ने जब मुझे पसन्द किया तो सब लड़कियाँ मुझसे ईर्षा करने लगी। मैं चाहती हूँ वे सब इस महल का सुख लूटने आवें और मैं जाकर उसी अनाथालय में रहूँ।"

"ऐसा न कहो रानी, जान पड़ता है भाई साहब आज रात नहीं आए।"

"आए थे, पर मुझे रुलाने भर को ही आए थे। जब विधाता ने मेरे भाग्य में सुख नहीं लिखा तो तुम और ससुर जी चाहे जितना प्रयत्न करो मैं सुखी नहीं रह सकती।"

"खैर यह बताओ कि चले क्यों गए?"

"मैं उनका कौन हूँ जो मेरे पास रहते।"

"कहां गये?"

"किसी वेश्या के यहाँ?"

"तुमने रोका नहीं?"

"रोका था।"

"क्या कहा?"

"कहा कि तुम इस लायक नहीं हो कि तुमको प्यार करूँ?"

"झूठ कहते हैं। तुम तो बड़ी अच्छी हो।"

"नहीं, अच्छी नहीं हूँ। अच्छी होती तो वे मुझे क्यों छोड़ जाते। मैं अनाथिनी हूँ, अनाथिनी की तरह मुझे रहना चाहिए।

"नहीं, तुम अनाथिनी नहीं हो, इस बंगले की रानी हो।"

इस रानी से मैं इस बगले की मजदूरिन होती तो अच्छा था।"

श्यामा व्याकुल हो उठी। वह समझ न सकी कि रानी को किस प्रकार सान्त्वना दे। ठीक उसी समय उसको एक क्षण को भी न भूलने वाले श्यामसुन्दर ने बाहर से पुकारा। श्यामसुन्दर जनाने महल में नहीं जाता था। श्यामा ने भीतर से

कहा—मैं यहाँ हूँ। अन्दर चले आओ। मेरी उपस्थिति में तुम यहाँ बेधड़क आसकते हो।

श्यामसुन्दर के अन्दर आते ही भाई पर क्रुद्ध श्यामा ने कहा—सुन्दर, पुरुष वेश्यागामी क्यों हो जाते हैं?

श्यामसुन्दर को रानी के दुःख का पता न था। नित्य की भांति अपने वर्ग की तरफ से वकालत करते हुए उसने कहा—स्त्रियाँ वेश्या क्यों हो जाती हैं?

यह बे मौके का उत्तर सुन कर श्यामा कुछ झुझलाई। उसने रुखे स्वर से कहा—सुन्दर, सदैव यह हंसी अच्छी नहीं। फिर भी जब तुमने यह बेहूदा सवाल किया है तो इसका उत्तर दूंगी। सुनो स्त्रियाँ स्वावलम्बी नही हैं। तुम उन्हें असहाय अवस्था में अपने घर से निकाल दोगे तो तुम्हारे दस भाई उनकी इज्जत लेने पर उतारू हो जायगें।

श्यामा को बाच ही में रोक कर श्यामसुन्दर ने कहा, "बस बस बहन समझ गया मैं हार गया, लज्जित न करो।"

उसे चन्द्रकला का ध्यान हो आया था इसलिये उत्तेजित होकर उसने यह बात कही थी। श्यामा ने कहा—'अच्छा बताओ पुरुष वेश्यागामी क्यों हो जाते हैं।'

"नालायक होते हैं, कृतघ्न होते हैं, स्त्री की कदर करना नहीं जानते, अपने कर्तव्य को नहीं समझते?"

श्यामा चुप हो रही, पर रानी को सन्तोष नहीं हुआ? उसने

ननंद के कान में कहा—श्याम, इनसे पूछो कि अपने साधारण विनोद में इस प्रश्न का क्या उत्तर देंगे ?

श्यामा कुछ मुस्कराई । फिर उसने श्यामसुन्दर से कहा—रानी चाहती है पुरुषों की वकालतनकरते हुए तुम इस प्रश्न का उत्तर दो ।

श्यामसुन्दर के दिल में जो चन्द्रकला का ध्यान हो आया था वह श्यामा के मुस्कराते ही गायब हो गया । उसने हंसते हुए कहा—उनकी स्त्रियाँ उन्हें अपने प्रेम पाश में बाँध नहीं सकतीं, इसीलिये ।

"पति पर जाल डालना क्या उचित है ?" रानी ने मुंह फेर कर कहा ।

"नहीं, पर जो बिगड़े दिल पति हैं उन पर बिना कुछ जादू किए काम नहीं चलता ?"

"जादू कैसे किया जाता है ?" रानी ने पूछा ।

"जादू किया नहीं जाता । स्त्री की आकर्षक वेष भूषा, चाल ढाल, बोल चाल को ही जादू कहते हैं ।"

"रूप रङ्ग भी ।" श्यामा ने कह कर श्यामसुन्दर के कथन को पूरा किया ।

"मुझे तो कुछ नहीं आता" रानी बोली ।

"सीखो ! और कोई उपाय नहीं है ।"

"किससे ?"

"श्यामा से ।" कह कर श्यामसुन्दर मुस्करा दिया ।

"मानों मुझे यह सब आता है ? क्यों ?" लजाते हुए श्यामा ने कहा ।

"श्यामा तुमने किससे सीखा ठीक २ बतलाओ ।" रानी ने ननंद के मानसिक भाव को ताड़ते हुए कहा ।

"बड़ी भोली हो रानी, तुम हर एक का विश्वास कैसे कर लेती हो ?"

श्यामा के उपरोक्त कथन की परवाह न करके रानी ने फिर उसके कान में कहा—श्याम ! अब यह पूछो कि मुझ जैसी स्त्रियाँ यह सब वशीकरण की विद्या किससे सीखें ?

यद्यपि यह बात बहुत धीरे कही गई थी पर श्यामसुन्दर ने उसे सुन लिया । उसने कहा—यह बात वेश्याओं से ही सीखी जा सकती है ।

"यानी स्त्रियाँ वेश्या बन जाय क्यों ?"

"नहीं उस फूल के समान बन जायँ जो अपने रूप और गन्ध के बल से एक बार आकर बैठे हुए भ्रमर को फिर दूसरे फूल पर जाने का मौका नहीं देता ।"

"ठीक है ।" रानी बोली ।

"तो तुमने वशीकरण मन्त्र पढ़ लिया ।" श्यामा बोली ।

रानी ने जवाब दिया—नहीं अभी एक बात की कसर है । जिन वेश्याओं के यहाँ तुम्हारे भाई साहब मेरे हृदय का बलिदान करते हैं उनको मैं देख सकूं, उनसे बातें कर सकूं ? तब मैं उनका अपना मुकाबला करूं । देखूं कि उनमें क्या बात है

जो मुझ में नहीं है। फिर वह बात मैं अपने में पैदा कर सकती हूँ या नहीं यह समझ लूं। तब कहीं वशीकरण मंत्र का कुछ अंश पढ़ लिया है यह कह सकती हूँ।

"यह काम तो मुश्किल नहीं है श्यामसुन्दर बोले ?"

"तो तुम इस काम को कर दोगे ?" रानी ने कहा।

"नहीं, तुम्हारी ननद चाहें तो कर सकती है !"

"क्यों श्याम ?"

हां, अगर इससे तुम्हारा कार्य्य सिद्ध होने की संभावना हो तो वेश्याएं क्या इन्द्र की परिओं को भी लाकर तुम्हारे चरणों पर लोटा दूंगी, भाभी !"

रानी फूल कर कुप्पा होगई। उसे जान पड़ा मानों सारा संसार उसके पैरों तले लोटने आ रहा है।

बीसवां परिच्छेद

आर्य्य समाज

रविवार का प्रातः काल था। उधर गिरजे का घंटा बज रहा था, इधर आर्य्य समाज मन्दिर में 'ओ३म' स्वाहा का नाद गूंज रहा था। जान पड़ता था ऋषियों के समय की प्राचीन छटा फिर भारत में आगई है। मन्दिर में सब चीज़ें स्वच्छता पूर्वक रखी थीं, सभासद काफी संख्या में एकत्रित हुए थे। सेठ चुन्नीलाल, महाशय राम गोपाल, लाला वंशीधर, भजनीक चङ्गामल और समाज के मन्त्री महेश प्रसाद इस काम में विशेष दिलचस्पी ले रहे थे। हवन के बाद सेठ चुन्नीलाल का व्याख्यान हुआ। आपने कहा --"हम आर्य्य समाजी हैं। हमारा वैदिक धर्म संसार के सब धर्मों से श्रेष्ठ और प्राचीन है। सत्य दो नहीं हो सकते। इसलिए वैदिक धर्म के सिवाय जितने धर्म हैं सब झूठ हैं। आर्य्य समाज का बच्चा बच्चा तर्क करना व्याख्यान देना और पोपों की पोल खोलना जानता है। हमारा मिशन होना चाहिए कि हम सारे संसार को वेदों का रास्ता दिखा दें। हमें उपदेशक तयार करने की जरूरत नहीं है। हम

माँ के पेट से ही यह सब बातें सीखकर आते हैं। हमें चाहिए कि हम टिड्डी दल की तरह सारे संसार में फैल जायें और जितने मत मतान्तर है सब को चर डालें। यह न समझो कि हमने बहुत तरक्की कर ली है। अभी बहुत बाकी हैं। हमें वह दिन लाना है जब हर एक गिरजे पर ओ३म का झण्डा फहरायगा और हर एक मसजिद में वैदिक धर्म का डंका बजेगा। नवयुवको! यह सब काम तुम्हीं को करना है। सब एक स्वर से कहो—"वैदिक धर्म की जय! ऋषि दयानन्द की जय!!"

सेठ जी थक कर बैठ गये। करतल ध्वनि और जय जयकार के बीच से भजनीक चङ्गामल अपना हारमोनियम सँभालते हुए खड़े हुए। आपने गाया।

कुरआन और बैबिल में ज्ञान कुछ नहीं है।
इनके सिवा जगत में अज्ञान कुछ नहीं है।
इकपूत बन खुदा के इक बन खुदा के बेटे।
लेटे किसी कबर में हैं जान कुछ नहीं है॥
इन सैकड़ों बरस के मुर्दों को पूजता जो।
उसके मुकाबिले में हैवान कुछ नहीं है॥
वैदिक बटोहिओ अब शुद्धी करो जहाँ की।
इस काम में काम आए तो प्रान कुछ नहीं है॥

फिर कर्तल ध्वनि हुई। भजनीक चङ्गामल कुरते के छोर से मुँह का पसीना पोंछते हुए बैठ गये। अब महाशय रामगोपाल का भाषण आरम्भ होने वाला था कि एक अधगोरा

साहब सभा में आ खड़ा हुआ और बोला—"सेक्रेटरी से कुछ बातें करनी हैं।"

मुन्शी महेश प्रसाद साहब के साथ एक तरफ चले गये। थोड़ी देर में वापस आए और बोले—"भाइओ! हिन्दू अबला जबरदस्ती ईसाई बनाई जा रही है, आज वह छीन न लाई गई तो ईसाई बनाली जायगी। हम लोगों को अभी घटना स्थल पर पहुँचना चाहिए, सारे शहर में इस बात की खबर कर देनी चाहिए और पुलिस को भी इत्तिला देनी चाहिए।"

सेठ चुन्नीलाल और भजनीक चङ्गामल ने सभासदों में जो जोश भरा था वह काम आगया। सब के सब वैदिक धर्म की जय का भीषण नाद करते हुए पादरी रैमडस के बङ्गले की ओर चल पड़े।

पाठक समझ गये होंगे कि वह अधगोरा साहब मिसेज़ रैमडस का पुराना प्रेमी वही जैक था। मिस्टर रैमडस की उपस्थिति में वह अपनी प्रेमिका से नहीं मिल सकता था। इसलिए मिस्टर रैमडस को अदालत आदि के वास्ते घर से बाहर भेजने के लिए उसने यह चाल चली थी। अपनी चाल कारगर होते देख वह खुश खुश जिधर से आया था उसी तरफ चला गया।

देखते ही देखते मिस्टर रैमडस के बङ्गले को हिन्दुओं की एक बड़ी जमाअत ने घेर लिया। जिस चन्द्रकला को केवल

मुसलमान का छुआ पानी पी लेने के कारण उसके ससुर ने दूध की मक्खी के समान निकाल दिया था। जिसे शास्त्री जी के घर से निकलने पर ईसाई रैमडस के सिवाय कोई आश्रय देने वाला न था, उसी का उद्धार करने आज इतने हिन्दू कैसे इकट्ठा हुए हैं? क्या समझा है? क्या हिन्दू धर्म उदार हो गया? क्या वह अभागिनी चन्द्रकला को फिर से वापस ले सकता है? यदि नहीं तो इस जमाव का क्या मतलब है? चन्द्रकला यही सोच सोच कर घबड़ाने लगी।

मिस्टर रैमडस जैक के सिवाय और किसी आपत्ति से घबराने वाले व्यक्ति न थे। वे अपने बङ्गले से बाहर निकले और दृढ़ता तथा सच्चाई के साथ बोले—"मेरे यहाँ एक हिन्दू लड़की है, उसे यहाँ रहते साल भर से ऊपर हो गया। मैं उसे बहकाकर यहाँ नहीं लाया, वह अपनी जरूरत से यहाँ आई है। उसके ससुर ने उसे छोड़ दिया, किसी हिन्दू ने उसे आश्रय नहीं दिया, तब हमने उसे रखा है। आप लोगों के जोश की मैं प्रसंशा करता हूँ पर मुझे खेद है कि यह केवल जोश ही जोश है। आप लोगों में से यहाँ भी बहुत कम ऐसे होंगे जो उस अबला के हाथ का पानी पियें। आश्चर्य्य की बात है कि जब आपकी स्त्रियाँ मारी मारी फिरती है, ठोकरें खाती हैं, तब आपको उन पर दया नहीं आती और जब वे ईसाई हो जाती हैं तो आप लोगों का धर्म जागता है।"

भीड़ ने कहा—हम लेकचर सुनने नहीं आए हैं। उस हिन्दू देवी को अभी हमारे हवाले करो।

मिस्टर रैमडस ने जवाब दिया—वह लड़की हमारे यहाँ आजाद है। तुम लोगों की भाँति हम स्त्रियों को कैद में नहीं रखते। यदि वह चाहे तो आप लोगों में मिल सकती है।

"वह जरूर चाहेगी, नहीं नहीं चाहती होगी।" भीड़ में से आवाज आई।

"कदापि नहीं, तुम लोग अपना एक प्रतिनिधि चुनो उसे हम उस लड़की से मिला सकते हैं। यदि इससे आप लोगों को तसल्ली हो जाय तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

सेठ चुन्नीलाल इस कार्य्य के लिए चुने गये। मिस्टर रैमडस ने उन्हें ले जाकर चन्द्रकला से मिला दिया। सेठजी ने कहा—"अकेले में बातें करूँगा कष्ट न हो तो आप जरा अलग चले जायें।

मिस्टर रैमडस बाहर चले आए। सेठजी ने कहा—"बेटी, तुम हिन्दू हो।"

"पहले थी, अब नहीं हूँ।"

"अब क्या हो?"

"कुछ नहीं।"

"तुम ईसाई होना चाहती हो?"

"नहीं?"

"फिर इनके साथ क्यों रहती हो?"

"माँ बाप के समान ये मुझे रखते हैं, इनके साथ न रहूँ तो कहाँ जाऊं।"

"कुछ दिन में अपना असर डालकर इसी प्रकार प्रेम दिखाकर ये तुम्हें ईसाई बना लेंगे।"

"बना लेंगे तब देखा जायगा?"

"तुम यहाँ कैसे आई हो?"

चन्द्रकला ने अपनी सारी कथा कह सुनाई। सेठजी की आँखों में आँसू आगये। उन्होंने कहा—"यहाँ रहने से तुम्हारे स्वामी तुमको कदापि नहीं मिल सकते?"

"फिर कहाँ मिलेंगे?"

"हमारे यहाँ चलो, हम उनका पता लगाएंगे और इस बात की कोशिश करेंगे कि वे तुम्हें स्वीकार कर लें।"

"यदि न मिलें?"

"मिलेंगे कैसे नहीं?"

"एक शास्त्री से धोखा खा चुकी हूँ, कौन जाने आप मुझे क्या सोच कर यह सब कह रहे हैं।"

"मैं व्यक्ति रूप से यहाँ नहीं हूँ, मैं एक संस्था की ओर से तुम्हारे पास आया हूँ। तुम आर्य्य समाज के विधवा आश्रम में रहोगी, वहाँ तुम्हारी जैसी और भी बहुत सी असाहय देवियाँ हैं।"

"वहाँ तुम मुझे मेरे स्वामी से मिला दोगे?"

"जरूर?"

"धोखा तो नहीं दोगे?"

"नहीं।"

"तब मैं तुम्हारे साथ चलूंगी।"

मिस्टर और मिसेस रैंमडस चन्द्रकला पर ईसाई होने के लिए अनुचित दबाव डाल ही रहे थे। यही नहीं उसे विवाह करने के लिए भी कह रहे थे। इसलिए चन्द्रकला ने उनसे अलग हो जाने का अच्छा अवसर देखा।

सेठ चुन्नीलाल ने पादरी रैंमडस को बुलाकर कहा—"यह देवी हमारे साथ जाने को तैयार है?"

"क्यों मिस चन्दा?" आश्चर्य्य से मिस्टर रैंमडस ने पूछा।

"हाँ।"

"हमलोगों से कोई भूल हुई क्या?।"

"नहीं आपके यहाँ से वैसे ही अलग हो रही हूँ जैसे बेटी अपने बाप के यहाँ से विदा होती है। इन्हों ने वादा किया है कि ये मुझे मेरे स्वमी से मिला देंगें। बस इसी लालच से इनके साथ जा रही हूँ।"

मिस्टर रैमडस समझ गये कि सेठ चुन्नी लाल ने चन्द्रकला को जो प्रलोभन दिया है उसका कोई उपाय नहीं है। बगल के पर्दे से मिसेज़ रैमडस सब बतें सुन रही थीं। बाहर आकर उन्हों ने कहा - बेटी चन्दा तुमको मैं बहुत दिनों में भूल सकूँगी! जाओ? प्रभु ईशु तुम्हारी इच्छा पूर्ण करें! अब तुम्हें पढ़ा लिखा

दिया है। हमारी सहायता की अगर जरूरत पड़े तो फौरन लिखना ?

"माँ, कलेजे पर पत्थर रखकर तुमसे विदा हो रही हूँ।"

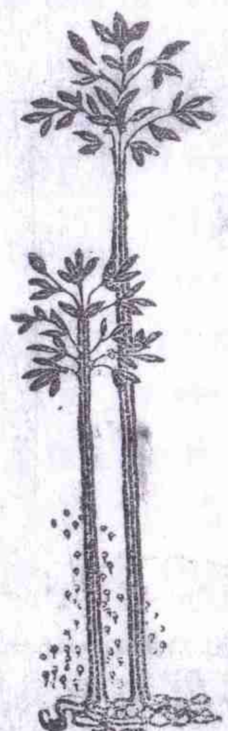
"जानती हूँ चन्दा ! स्वामी का लाभ न होता न तुम हमारा घर सूना न करतीं।"

चन्द्रकला ने मिस्टर और मिसेज़ रेमडस के पाँव छुए। सेठ चुन्नीलाल भी इस वियोग के समय अपने को सँभाल न सके। आँखों में जलभर कर उन्हों ने मिस्टर रेमडस से कहा—"आज से आप मेरे गुरू हुए, धर्म प्रचार किस प्रकार करना चाहिए, यह मैंने आप से सीखा।"

इसके बाद सेठ चुन्नी लाल पादड़ी साहब से हाथ मिला-कर चलने लगे। चन्द्रकला उनके पीछे पीछे चली। द्वार तक मिस्टर और मिसेज उन्हें पहुंचाने आए। इन सब की आँखें आंसुओं से तर थीं।

सेठ चुन्नीलाल की पत्नी एक गाड़ी पर बाहर उपस्थित थीं। चन्द्रकला को अंगरेजी पोशाक पहने देख भीड़ समझ न सकी कि वही वह वस्तु है जिसे वह छीनने आई है। जब चन्द्रकला गाड़ी पर बैठी तब इस बात का पता चला। वैदिक धर्म की जय और हिन्दू धर्म की जय से आकाश गूंज उठा। सेठ चुन्नीलाल को मालाएं पहनाई गईं। मानों उन्होंने ईसाइयों के डेढ़साल के प्रभाव को बात की बात में हवा कर दिया।

गाड़ी चली जा रही थी। चारों तरफ जय जयकार हो रहा था। पर चन्द्रकला को इसकी परवाह नहीं थी। वह आँखों में जल भरे जब तक देख सकी बँगले के बाहर खड़े ईसाई दम्पति को देखती रही। जब वे ओझल हो गये तो उसने एक दीर्घनिश्वास छोड़ कर कहा—स्वामी ! केवल तुम्हारे लिए एक बार फिर अज्ञात और अनजान दिशा की ओर प्रस्थान कर रही हूँ, आओ ! मुझे दर्शन दो ! मेरा उद्धार करो !"



इक्कीसवां परिच्छेद

विधवा आश्रम

काशी की आर्य्य समाज ने श्यामसुन्दर को खोजने के जितने उपाय हो सकते थे किये। अखबारों में विज्ञापन छपाए, सिरसा और रामनगर में पूछताछ की पर कुछ पता न चला। एक महीने के बाद खास खास सदस्यों की एक सभा हुई जिसमें यह तय किया गया कि श्यामसुन्दर या तो आत्महत्या करके मर गया है या किसी दूर देश में चला गया है। उसके प्रगट होने की सम्भावना नहीं है इसलिए चन्द्रकला का पुनर्विवाह कर दिया जाय। उसके विवाह का विज्ञापन भी अखबारों में दिया गया। चारों तरफ से अर्जियाँ आने लगीं। इस समाज से वहिष्कृता नारी का उद्धार करने के लिए कितने ही ब्राह्मण युवक भी लालायित हो गये।

चन्द्रकला को इन सब बातों का बिलकुल पता न था और अभी उसे कुछ दिन और पता न चलता पर एक पञ्जाबी सज्जन ने बहुत जल्दी कर दी। विवाह का विज्ञापन देखने के बाद ही वे लाहौर से रवाना हो गए और आर्य्य समाज के मन्त्री से

मिले। पञ्जाब के नामी आर्य्य समाजियों से अपनी चाल चलन के बीसों प्रमाण पत्र लिखा लाए थे। विवाह हो जाने पर विधवा आश्रम को १०००) नकद दान देने का प्रण कर चुके थे। मन्त्री महोदय तथा अन्य सब सभासद ऐसे दानी मानी के साथ चन्द्रकला का ब्याह कर देने के लिए सहमत हो गये। उन पञ्जाबी सज्जन ने विवाह से पहले चन्द्रकला को देखने की इच्छा प्रगट की अतएव उन्हें मन्त्री महेश प्रसाद विधवा आश्रम में ले गये।

विधवा आश्रम में ग्यारह विधवाएं थीं। तीन के साथ एक एक बच्चे थे, दो गर्भवती थीं, शेष छः तरुण बालाएँ थीं। इन्हीं छः में एक चन्द्रकला भी थी। चन्द्रकला रूप रङ्ग में और विद्या बुद्धि में भी सबों से बढ़ कर थी। बर्ताव में वह इतनी कोमल और सरल थी कि उसे सब जी जान से प्यार करती थीं। पुरुष समाज कितना स्वार्थी और पातकी है यह चन्द्रकला ने अपनी कहानी कह कर सब के दिल में जमा दिया था। चन्द्रकला के साथ उन पाँचों ने भी पुनर्विवाह न करने का प्रण कर लिया था। मन्त्री जी के साथ जो अपरिचित आदमी है वह कौन है और क्यों आया है वह सब सोच ही रही थीं कि महेशप्रसाद ने चन्द्रकला को पुकारा। चन्द्रकला उनके पास गई। मन्त्री जी ने कहा—"आप लाहौर के रईस हैं।"

"होंगे।" रूखे स्वर से चन्द्रकला ने जवाब दिया।

मन्त्री जी ने पूछा—"अनमनी क्यों हो ?

चन्द्रकला—आप ईश्वर का होना मानते हैं या नहीं ?

मंत्री—क्यों नहीं ?

चन्द्रकला—उसी ने मुझे अनमनी कर रखा है, जब उसकी कृपा होगी, प्रसन्न हो जाऊँगी।

मंत्री—आप पञ्जाबी सज्जन हैं।

चन्द्रकला—होंगे, मुझसे क्या मतलब ?

मंत्री—मतलब है, तभी तो कहता हूँ। इन्हीं के साथ तुम्हारा भविष्य व्यतीत होगा।

चन्द्रकला चौंक पड़ी—क्या कहा ? मेरा भविष्य अन्धकार मय है ? मेरा चिराग बुझ गया जान पड़ता है। मुझ असहाया का भविष्य ईश्वर के साथ व्यतीत होगा, मनुष्य के साथ नहीं।

मंत्री—ये बड़े धनी आदमी हैं।

चन्द्रकला—मुझे धन का लोभ नहीं है।

मंत्री—तुम्हारे साथ विवाह हो जाने पर ये विधवा आश्रम को १०००) दान देंगे, इसी से तुम समझ सकती हो कि ये क्या हैं।

चन्द्रकला उत्तेजित हो उठी। उलटे पावों वह अपनी सरीखी पांचों विधवाओं के पास लौट गई और बोली—बड़ा धोखा हुआ। समझती थी आर्य्य समाज बड़ी अच्छी संस्था है, विधवा आश्रम खोलकर असहाय स्त्रियों की सहायता करती है, पर अब मालूम हुआ ? यह विधवा आश्रम नहीं है

भागो यह स्त्रियों के खरीद फरोख्त का अड्डा है।

मंत्री जी ने पास जाकर कहा—जब बेचना ही उद्देश हो तो तुम्हें दस हजार में बेच सकते हैं।

चन्द्रकला—यह सभ्यतापूर्ण बिक्री है, पबलिक की आँख में धूल झोंक कर विधवाएँ बेची जाती हैं।

मंत्री जी—यह दान है बिक्री नहीं है।

चन्द्रकला—दान बदला पाने की इच्छा से नहीं दिया जाता ? यह दान का बहाना मात्र है। इन्हें वास्तव में दान देना होता, विधवाओं के साथ हमदर्दी होती तो वहीं से १०००) का मनीआर्डर आपके नाम भेज देते।

पञ्जाबी सज्जन कुछ लज्जित हुए और बोले—चन्द्रकला तुम ठीक कहती हो। मुझे दान देने की इच्छा नहीं है। मैं ब्याह की इच्छा से ही आया हूँ। पर दान न दूँ तो ब्याह नहीं हो सकता। और बिना दान लिए इन संस्थाओं का काम भी नहीं चल सकता। इसी आश्रम से तीन साल हुए मैं एक लड़की ले गया था। उसके लिए पाँच सौ ही दान देने पड़े थे। अब वह मर गई। वह बड़ी अच्छी थी इसी लिए इस आश्रम में आया हूँ।

चन्द्रकला—अगर कोई माँ बाप इसी प्रकार दान लेकर अपनी कन्या का ब्याह करें तो उसे आप कन्या-विक्रय कहेंगे या नहीं ?

पञ्जाबी—जरूर कहेंगे।

चन्द्रकला—यह संस्था हम असहाय अबलाओं के लिए माँ बाप के तुल्य है। तब इसका इस प्रकार दान लेना कहाँ तक उचित है।

मंत्री—माँ बाप तो जिसके साथ चाहते हैं ब्याह देते हैं और लड़कियाँ चूं तक नहीं करतीं।

चन्द्रकला—ठीक है, पर यह धार्मिक और शिक्षित लोगों की संस्था है। यह नासमझ माँ बाप की तरह नहीं हैं। इस संस्था को चाहिए कि ब्याह करने से पहले विधवाओं से राय ले ले।

मंत्री जी—अभी तक इसी प्रकार, बिना पूछे भले ब्याह होता रहा है। तुम पहली ही महिला हो जिसने इस प्रकार अनिच्छा जाहिर की है।

चन्द्रकला—मैं ब्याह नहीं करूंगी। अब इस सम्बन्ध में बातें करने का आपको कोई हक नहीं है।

मंत्री—यह आश्रम विधवाओं को हमेशा नहीं रखता। ब्याह करके उनको अलग कर देता है।

चन्द्रकला—तो यह विधवा विवाह आश्रम है न कि विधवा आश्रम।

मंत्री—इस समय तो तुम यही समझ सकती हो ?

चन्द्रकला—नाम से यह प्रगट हो जाना चाहिए कि संस्था क्या है और उसका उद्देश्य क्या है ? भ्रममूलक नाम होने से तुम नहीं समझते हो मुझे कितनी ग्लानि हुई है ? हाय ! मैं

उस स्नेही इसाई परिवार से क्यों आई ? हटो मुझको जाने दो।

चन्द्रकला आश्रम से जाने लगी। मन्त्री जी कुछ डरे। उन्होंने कहा—इस आश्रम के कर्ता-धर्ता सेठ चुन्नी लाल हैं, मैं अभी जाकर उनको भेजता हूँ। तब तक ठहरने की कृपा करो देवी, हाथ जोड़ता हूँ।

मंत्री महोदय उन पञ्जाबी सज्जन को लेकर बाहर चले गये। चन्द्रकला और उसकी पांचों सहेलियों ने निश्चय किया कि वे भाई भाई की भाँति एक दूसरे की सहायक होंगी और आवश्यकता पड़ने पर सब एक साथ आश्रम छोड़ देंगी।

भजनीक चङ्गामल बहुत दिनों से ब्याह के प्रयत्न में थे। विधवा आश्रम के संचालकों ने उनसे वादा कर दिया था कि यदि कोई विधवा उनके साथ विवाह करने को राज़ी हो जायगी तो कर दिया जायगा। चङ्गामल जी को यह प्रलोभन इसलिए भी दिया था कि उनको विधवाओं को प्रति दिन अवैतनिक रूप से भजन सिखाने का काम सौंपा गया था। यही मानों उनका वेतन था। चङ्गामल जी प्रायः सब विधवाओं से छेड़ छाड़ करते थे, पर सब उनको डाट देती थीं। सिर्फ एक बहुत कम आयु की विधवा चुप रह जाती थी। वह इसलिए कि वह अत्यन्त लज्जावती थी। चङ्गामल ने समझा वह उनके फुसलाने में आ जायगी इससे वे उसे और भी छेड़ने और अपना प्यार दर्शाने लगे। अन्त में ऊब कर उस विधवा

ने सारा हाल चन्द्रकला से तथा अन्य सहेलियों से कहा। चन्द्रकला ने उसे समझाया कि यदि वे विशेष छेड़ छाड़ कर तो उनके मुँह में चपत जमाए। मौके पर हम सब भी आ पहुँचेंगी और उपदेशक जी की खूब मरम्मत की जायगी। चङ्गामल को इस षडयन्त्र का हाल मालूम न था। आज जब वे आश्रम में आए तो इत्तिफाक से वह विधवा अकेली मिल गई। वे उसे सुनाकर धीरे धीरे गाने लगे —

जब इश्क मुहब्बत का मजा पाय जावगी।
तब आपही से पास मेरे आय जावगी॥

विधवा ने तड़ तड़ तड़ तीन चार तमाचे जमा दिए। उपदेशक जी मुँह पकड़ कर बैठ गये। आश्रम में जितनी विधवाएँ थीं सब एक साथ घटनास्थल पर आ पहुँची और लगीं पूछने—क्या है उपदेशक जी?

अत्यन्त लज्जित होकर चङ्गामल ने कहा—किए का फल! मैंने जो अपराध किया उसका मुझे दण्ड मिला! मेरी अक्ल अब ठिकाने आगई है।

चन्द्रकला आदि ने पहले उपदेशक महाशय को खूब ठोंकने का निश्चय किया था पर उनको इस प्रकार पश्चात्ताप करते हुए देख उन्हें दया आई। इसी समय सेठ चुन्नीलाल वहाँ आ पहुँचे और बोले—क्या मामला है?

चन्द्रकला—हम ६ बहिनें इसी दम आपका आश्रम छोड़ रहीं हैं।

चङ्गामल ने समझा कि उन्हीं के व्यवहार से वे सब जा रही हैं। चङ्गामल में स्त्री विषयक यह कमज़ोरी जरूर थी पर इसके सिवाय उनमें कोई अवगुण न था, आर्य्य समाज के वे सच्चे सेवक थे। वे उन विधवाओं के पैरों पर सिर रख रख कर कहने लगे—देवियों! अपराध क्षमा हो, अब ऐसी भूल कभी न होगी।

"आप तो फ़िज़ूल ही घबड़ा रहे हैं।" कहकर चन्द्रकला ने चङ्गामल को अलग किया और सेठ चुन्नीलाल से कहा—

अब आज्ञा दीजिए हम सभों से जो अपराध हुए हों उन्हें क्षमा कीजिएगा।

चुन्नी लाल—आखिर बात क्या है?

चन्द्रकला—यह विधवा आश्रम नहीं, विधवा विवाह आश्रम है और हम सब विवाह नहीं करना चाहतीं, इसलिए इस आश्रम में कैसे रह सकती हैं।

चुन्नी लाल—क्षणिक आवेश में कोई काम करना ठीक नहीं है। इस आश्रम में कोई ऐसी बात नहीं हो सकती जिससे तुम्हारे धर्म और स्वतन्त्रता में आघात पहुँचे।

चन्द्रकला—यह तो ठीक है पर हम सब पुनर्विवाह के लिए तैयार नहीं हैं।

चुन्नी लाल—नहीं हो न सही, आश्रम छोड़ने की क्या जरूरत है।

चन्द्रकला—तो यहाँ रह कैसे सकती हूँ।

चुन्नी लाल—जो ब्याह नहीं करतीं उन्हें कोई काम सिखा दिया जाता है और नौकरी दिला दी जाती है।

चन्द्रकला—आपने किसी को कोई काम सिखा कर नौकरी दिलाई है।

चुन्नीलाल—अब तुमको और तुम्हारी सहेलियों को सिखायेंगे।

चन्द्रकला—आपकी इस कृपा के लिये धन्यवाद है।

सेठ जी अपने घर चले गये पर दूसरे ही दिन प्रातः काल उन्हें मालूम हुआ कि चन्द्रकला रात ही को आश्रम से न जाने कहाँ चली गई। उसके बिस्तर में सेठ जी के नाम एक चिट्ठी थी जो उन्हें दी गई। उसमें लिखा था—

मेरे लिये अभी सबसे बड़ा काम बाकी है वह पति का दर्शन करना, उनके चरणों में स्थान प्राप्त करना। मैंने सब से पहले उसी को करने का निश्चय किया है। जो बहनें मेरे साथ आश्रम छोड़ना चाहती थी उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे आश्रम में बनी रहे। चाहे अपना विवाह कर लें चाहे पवित्रता पूर्वक ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करें। यदि मैं सफल मनोरथ हुई तो फिर कभी अपने पति के साथ आकर इस आश्रम के भाई बहिनों का दर्शन करूँगी। —चन्द्रकला

बाइसवां परिच्छेद

नगीना बाई

शाम को करीब नौ बजे होंगे एक बढ़िया मोटर चन्द्रमा के निकलने का सा प्रकाश फेकती हुई इलाहाबाद जार्जटउन से निकल कर चौक की ओर जा रही है। मोटर में बढ़िया अचकने पहने और रेशमी साफे बाँधे दो युवा पुरुष बैठे नज़र आ रहे हैं। तीसरा मोटर ड्राइवर भी इसी प्रकार की पोशाक पहने है। इनके सिवाय मोटर में और कोई व्यक्ति नहीं है।

"रानी, भूलोगी तो नहीं, कि तुमको हम वहाँ पर क्या कहेंगे।"

"मैं नहीं भूलूँगी, डर इस बात का है कि कहीं तुम्हीं लोग उलटा नाम लेकर सारा मामला न बिगाड़ दो।"

"नहीं, नहीं, हम नहीं भूल सकते, हम लोगों ने कालेज के नाटकों में भाग लिया है। हम जानते हैं कि किस स्थान पर क्या कहना चाहिए।"

"अच्छा बताओ मुझको क्या कहोगे?"

"राना।"

"ठीक है।"

"और तुम मुझको क्या कहोगी ?"

"श्याम कुमार।"

"ठीक है।"

ड्राइवर बोला—"और मैं क्या कहलाऊँगा।"

"सुन्दर लाल।"

"बहुत ठीक ! बहुत ठीक !!"

तीनों आदमी बड़े जोर २ से हँसने लगे। पाठक समझ गये होंगे कि ये रानी श्यामा और श्याम सुन्दर हैं। जिस वेश्या के यहाँ रानी के पति सुखविलास प्रायः जाते हैं उसी को देखने और उससे बातें करने की इच्छा से तीनों जा रहे हैं।

चौक में पहुंच कर मोटर उस तरफ को मुड़ी जिधर वेश्याएं रहती हैं। नीचे सुन्दर सुन्दर दूकाने सजी थीं। और ऊपर जगमग प्रकाश हो रहा था। वेश्याएं अपने छज्जों पर बैठी रास्ता चलने वालों पर दृष्टि बाण वर्षा कर रही थीं। किसी किसी कोठे से मधुर सङ्गीत भी सुनाई पड़ जाता है। सड़क पर रोजगारियों की कमी हो रही है और सुरा सुन्दरी प्रेमियों की संख्या बढ़ रही है। ड्राइवर सुन्दर लाल ने कहा—"राणा जी देखिये, नगर का यह भाग आप का कैसा अपूर्व स्वागत कर रहा है, सड़क पर के कोलाहल से ऐसा जान पड़ता है मानो जनमण्डली आपका जय जय कार कर

रही है और ऊपर छज्जों से सुन्दरियां अपनी बांकी चितवन के मनोहर फूल आप पर फेंक रहीं हैं।"

राणा ने मुस्करा दिया। श्यामकुमार बोले—"दिन को इस तरह जो आता है उसे क्या मालूम कि नगर का यह भाग रात को गन्धर्व पुरी को भी मात करता है।

राणा ने कहा—"यह नरक कुण्ड है, श्यामकुमार ! गन्धर्व पुरी नहीं है।"

सुन्दर लाल कहने लगे—"नरक कुण्ड जरूर है पर यह ऐसा नरक कुण्ड है जिसे अधिकांश लोग स्वर्ग से भी बढ़कर समझते हैं।"

राणा बोले—"ठीक है, यह बात न होती तो इस तरफ कौन आता ?"

श्याम कुमार कुछ कहने ही वाले थे कि मोटर एक ऊंचे भवन के नीचे खड़ी होगई। ड्राइवर ने आवाज लगाई—"श्रीमती नगीना बाई का विलास मन्दिर यही है ?"

"जी हां, हुजूर बगल के रास्ते से ऊपर चले आइये," कहता हुआ एक नौकर प्रकाश लिये हुये नीचे उतरा ?

राणा श्यामकुमार और सुन्दरलाल ऊपर चढ़े। तीनों के कमर से सुनहली तलवारें लटक रही थीं। नगीना इधर कई दिनों से बहुत उदास थी, पर अपनी सारी उदासी को दबा कर वह मुस्कराई और कहने लगी—"पधारिये, दासी खिदमत में तैयार खड़ी है, कुछ आज्ञा दीजिये।"

सुन्दरलाल ने कहा—"देखिये राणा साहब, आज नगीना बाई कुछ उदास हैं—पर आपको स्वागत करने के लिये इन्होंने अपनी उदासी को मुस्कराहट में ऐसा छिपा लिया है जैसा चन्द्रमा अपनी चमक में अपनी कालिमा को छिपा लेता है। आप राजा हैं आप को यह विद्या इनसे सीखनी चाहिये।"

इसके बाद सुन्दरलाल ने नगीना बाई से कहा—"श्रीमती जी, आज मेवाड़ के राणा आप के पास पधारे हैं, साथ में इनके छोटे भाई श्यामकुमार हैं।"

"धन्य भाग !!" कह कर नगीना उन्हें सलाम करने लगी। इसी बीच में श्यामकुमार ने कहा—"और ये श्रीयुत सुन्दरलाल जी हैं, राणा साहब के प्राइवेट सेक्रेटरी हैं, सुखबिलास नाम के कोई बैरिस्टर इनके दोस्त हैं। उन्हीं के मुख से आपकी तारीफ सुन कर उन्होंने राणा से चर्चा की। राणा संगीत के बड़े प्रेमी हैं इससे आपके पास स्वयं उपस्थित हुए है, आप बनारस की रहने वाली हैं न ?"

बनारस और सुखबिलास का नाम सुन कर नगीना को गुस्सा आ गया। उसकी आंखे लाल हो गई। उसके होंठ कापने लगे। उसने कहा—"नहीं मैं बनारस की नगीना नहीं हूँ, सुखबिलास बड़ा नीच है। वह मेरी तारीफ नहीं कर सकता। आप लोगों से भूल हुई, वह बनारसी कुतिया थोड़ा और आगे जाने पर जो मसजिद मिलेगी उसीके सामने रहती है। वह

पहले पहल वेश्या हुई है। मैं खानदानी वेश्या हूँ पर आज कल के जमाने में खानदानी वेश्याओं की कदर नहीं रही ?"

राणा ने कहा—"और तो सब ठीक है पर मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि सुखबिलास नीच कैसे है। कम से कम एक वेश्या को तो उसे नीच नहीं कहना चाहिये। क्योंकि उसने अपनी ही नहीं अपने बाप की कमाई का भी अधिकाँश भाग वेश्याओं को ही सौंप दिया।"

नगीना बोली—"उसके हृदय नहीं है, राणा साहब।"

राणा—कैसे ?

नगीना—आपको चन्द मिनटों की फुर्सत हो तो बैठ जाइये, सब बयान करूँगी।

राणा, श्यामकुमार और सुन्दरलाल तीनों फर्श पर बिछे एक स्वच्छ और मुलायम आसन पर बैठ गए। नगीना कहने लगी—"मेरी माँ बड़ी नामी वेश्या थी, कलकत्ता बम्बई आदि आदि शहरों तक वह नाचने जाती थी, मेरी शोहरत उससे भी ज्यादा हुई, यहाँ तक कि एक बार लन्डन में नर्तकियों की एक बड़ी नुमाइश हुई जिसमें मैं भी बुलाई गई। मैं वहाँ से लौट रही थी कि जहाज पर मेरी और सुखबिलास की भेंट हुई, मैं उसको वहीं से चाहने लगी, कुछ तो इसलिये कि वह बड़ा सुन्दर था और कुछ इसलिये कि वह इलाहाबाद का रहने वाला था। इलाहाबाद छोड़े मुझे बहुत दिन हो गये थे इसलिये अपने शहर के आदमी से स्नेह हो जाना स्वाभाविक था। इलाहाबाद आने

पर सुखबिलास मेरे यहाँ आने जाने लगा और धीरे धीरे मुझे इस बात पर विवश किया कि मैं उसके सिवाय और किसी से न बोलूँ न मिलूँ। मैं उसे इतना प्यार करती थी कि मुझे यह बात भूल गई कि मैं वेश्या हूँ, मुझे सबसे हँसना बोलना चाहिए। मैं एक मात्र उसकी होकर रहने लगी। नतीजा यह हुआ कि मेरे सारे ग्राहक एक एक करके टूटने लगे। मेरी माँ ने मुझे इसके लिये मने जरूर किया पर उस वक्त प्रेम के उन्माद में मैं कुछ सोच नहीं सकी। कुछ दिनों बाद एक घटना यह घटी कि सुखबिलास बनारस से एक ब्राह्मण की विधवा लड़की का मेरे पास लाया और उसे गाना आदि सिखाने के लिये कहा। मैंने उसे थोड़े ही दिनों में सब कुछ सिखा कर तैयार कर दिया। पर मुझे क्या खबर थी कि अपने ही हाथों में अपने सत्यानाश का बीज बो रही हूँ। उस लड़की ने मेरी माँ को मेरे खिलाफ भड़का दिया। सुखबिलास से मेरी इतनी शिकायतें कीं कि वह मुझसे विमुख होगया। अब वह उसी लड़की के पास जाता है और उसे ही नगीना कहता है। मेरी माँ भी उसी के साथ रहती है और सुखविलाज की गैर हाजिरी में उसके लिये शिकार तलाश किया करती है। बताइये यह विश्वासघात है या नहीं, पर मनुष्य का क्या कसूर। मेरे ऊपर विधाता ही बाम हो गया है नहीं तो क्या मेरी माँ भी मुझको छोड़ देतीं ?"

नगीना की आँखों में आँसू छलछला आए। राणा ने कहा—

"नगीना तुम्हारे साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है। पर जब एक बात का ख्याल करता हूं तो तुम्हारे ऊपर मुझे गुस्सा लगता है ?"

नगीना—"वह क्या सरकार।"

राणा—जिस प्रकार सुखबिलास ने बनारस की नगीना को पाकर तुम्हें छोड़ दिया उसी प्रकार किसी समय में तुम्हें पाकर उसने अपनी विवाहिता स्त्री का त्याग किया था। तब क्या तुम्हारे दिल में यह बात पैदा हुई थी कि उसकी स्त्री के भी हृदय है।

नगीना—वेश्याएँ इस बात का खयाल करें तो उनका पेशा कैसे चले।

राणा—नगीना, तुम्हारे हृदय नहीं हैं। तुम अपने पेशे के लिये संसार की स्त्रियों को रोती तड़पती देख सकती हो।

इसके बाद राणा ने सुन्दरलाल की तरफ इशारा करके कहा—चलो यहाँ से शीघ्र बाहर चलें।

तीनों जने नीचे आकर मोटर पर बैठ गये। मोटर और आगे बढ़ी।

इसके पहले ही बनारस की नगीना के यहाँ यह समाचार न मालूम कैसे पहुंच गया था। वह इनका स्वागत करने के लिये तैयार होगई थी। उसकी बनी हुई माँ नीचे आकर सड़क पर खड़ी होगई। जब मोटर वहाँ पहुंची तो उसकी बुढ़िया ने देखा कि अपने इतने बड़े जीवन में उसने ऐसे

सुन्दर आदमी नहीं पाये। उसने हाथ जोड़ कर कहा—"हुजूर ऊपर चलें।"

ड्राइवर सुन्दरलाल ने जवाब दिया—"तुम्हारे धोखे में एक और नगीना के यहाँ पहुँच गये थे। वहाँ कमरे में देर तक बैठे रहने से राणा जी की तबियत घबड़ा रही है। इस लिये वे चाहते हैं कि नगीना स्वयं मोटर पर आने की कृपा करे तो दो एक घंटे साथ में किसी बाग को सैर करें। कुछ बातें करें, उनका दिल बहलायें। राणा जी की यह पहली मुलाकात है इस लिये यह मोतियों की माला ले जाकर उन्हें दे दो।"

बुढ़िया मोतियों का वह हार लेकर ऊपर गई। एक बार में उसे कभी इतना धन किसी ने नहीं दिया था। मारे खुशी के उसका कलेजा उछलने लगा। दीपक के प्रकाश में वह माला जगमगा रही थी और बुढ़िया तथा नगीना की आँखे एक अपूर्व सुख का नुअभव कर चमक रही थीं। अब उन्हें सुख बिलास की कृपा की जरूरत नहीं थी।

बात की बात में दोनों चारों तरफ से मकान बन्द करके नीचे आ पहुँची। परस्पराभिनन्दन के पश्चात् नगीना बोली—"मेरी माँ अकेले डरती है। इस लिये हुजूर की बड़ी कृपा होगी यदि इसे भी मोटर में बैठाए चलें।"

"बड़ी खुशी के साथ बैठ सकती हैं," कहते हुए राणा और श्यामकुमार दोनों जगह देने के लिये नीचे आ खड़े हुए।

बुढ़िया बोली—"मैं ड्राइवर के पास बैठ जाऊंगी। बेटी आप लोगों के बीच में बैठेगी।"

मुस्कराती हुई नगीना मोटर में जा बैठी। उसके एक तरफ राणाजी और दूसरी तरफ श्यामकुमारजी बिराजे। दो तरफ से दो सुन्दर युवा पुरुषों को स्पर्श अनुभव करके नगीना का शरीर तरंगित होने लगा। मोटर चल पड़ी, रास्ते में बुढ़िया ने कहा—"राणा जी, देखिये, ड्राइवर साहब मुझे तिरछी निगाहों से देख रहे हैं और इशारे से मुझे अपनी गोद में बैठने को कह रहे हैं।"

राणा जी और श्यामकुमार बड़ी जोर२ से हंसने लगे। नगीना ने मुख पर रूमाल रख कर नजाकत के साथ मुस्करा दिया।

तेइसवां परिच्छेद

पेड़ क तले

चन्द्रकला विधवा आश्रम से निकल कर जब तक सबेरा नहीं हुआ बराबर पच्छिम की ओर चलती रही। जब सूर्य देवता ने अपनी प्रातः कालीन किरणों से उसके सामने का देश आलोकित किया तो उसने देखा कि बनारस से बहुत दूर आगई है। सिवाय सड़क के और कहीं मनुष्य की कृति का पता न था। सड़क के दोनों तरफ ऊँचे २ आम और पीपल के पेड़ थे, पेड़ों के पार हरे भरे खेत खड़े थे। जगे हुए पक्षियों के कलरव के सिवाय और किसी प्रकार की आवाज सुनाई न देती थी। तरह २ की बात सोचती हुई और चौंक २ कर इधर उधर देखती हुई चन्द्रकला चली जा रही थी। एकाएक उसके दिल में आया—"अब मुझे अपना वेष बदल डालना चाहिए।"

बस वह एक बाजरे के खेत में घुस गई। कुआँर का महीना था, ओस से खेत नहा रहा था। चन्द्रकला भीग गई पर इसकी उसको परवाह नहीं थी। बीच खेत में थोड़ी सी खुली जगह थी। वहीं जाकर वह बैठ गई। बनारस से अपने साथ एक पोटली में

वह कुछ सामान लाई थी। उसने पोटली खोल कर उसे देखना शुरु किया। एक तेज़ चाकू था, एक अत्यन्त मैली और मोटी धोती थी जिसे आश्रम की नौकरानी पहना करती थी, एक शीशी में तेल और एक कागज की पुड़िया में कारिख था, एक छोटा सा दर्पण था। चन्द्रकला ने तेल और कारिख को हाथ में रख कर मिलाया और उसकी तमाम शरीर में मालिश की। मालिश कर चुकने पर उसने दर्पण में अपना मुँह देखा। अजीब डरावनी शकल थी। पर लोगों को इस शकल से घृणा नहीं हो सकती थी। रूप छिप गया था, पर यौवन का छिपाना जरा मुश्किल था। चन्द्रकला सोच में पड़ गई। उसने चाकू उठाया कि नाक काट लूँ। पर इसके साथ ही उसे यह खयाल आया कि नाक काट लेने पर तो शायद स्वामी भी घृणा करने लगेंगे और न भी करें तो इस शरीर पर मेरा अधिकार ही क्या, यह तो मैं अपने स्वामी को दे चुकी हूँ। बिना उनकी आज्ञा इसको क्षत विक्षत करना उचित नहीं है। उसने चाकू जमीन पर रख दिया और उठ कर उस मैली धोती को पहना कि शायद इससे कुछ फरक पड़े। इस क्रिया से थोड़ा सा फरक जरूर हो गया। ब्राह्मण की कन्या शूद्रा जान पड़ने लगी। एक दूसरा मैला कपड़ा और था। उसे फाड़ फाड़ कर उसने हाथ पाँव और सिर में पट्टी बाँधी ताकि लोग समझें कि इन अङ्गों में फोड़े हो गये हैं। इसके बाद वह उठी। हाथ में चाकू ले लिया। और बाकी सब सामान जहाँ का तहाँ पड़ा रहने दिया। चाकू इसलिये ले लिया कि यदि

इस वेश पर भी कोई दुष्ट उस पर दौड़े तो वह उसको कुछ मजा चखा सके।

अब वह सड़क पर चल रही थी और सूर्य्य देवता आँख फाड़ फाड़ कर उसके इस परिवर्तित वेश को देख रहे थे—शायद उसे पहचानने की कोशिश कर रहे थे।

तमाम दिन वह चलती रही। भूख बढ़ रही थी, प्यास से कण्ठ सूख रहा था। पर इसकी उसे परवाह न थी। उसके हृदय में एक मात्र पति का दर्शन करने की लालसा थी। उसी के सहारे वह आगे बढ़ी जा रही थी। इस तमाम रास्ते में सिर्फ तीन चार मुसाफिरों से उसकी भेंट हुई थी जो आश्चर्य्य से उसकी तरफ घूरते हुए चले गए थे। इससे चन्द्रकला को यह तसल्ली हो गई कि अब रूप के प्यासे नर पिशाच उसकी तरफ न झुकेंगे।

जब सूर्य्य की अन्तिम किरणों ने बाजरे की फूली हुई बालों पर एक विचित्र प्रकार का प्रकाश डाला तब कहीं चन्द्रकला को शाम होने का खयाल हुआ। रात कहाँ बितानी चाहिये यही सोचने के लिये वह एक पेड़ की जड़ के नीचे बैठ गई। दक्खिन के खेतों में से उसे किसी के गाने की सी अवाज सुनाई पड़ी—

"निर्बल के बल राम,
सुन्योरी मैंने, निर्बल के बल राम॥"

चन्द्रकला को ऐसा जान पड़ा, मानों इस आवाज को वह बहुत बार सुन चुकी है। उससे खड़ा तो नहीं हुआ गया पर वह बैठे ही बैठे जिधर से आवाज आ रही थी उधर देखने लगी। जैसे ही गाने वाली बाजरे के खेतों से बाहर निकली, चन्द्रकला चिल्ला उठी—"नन्दा! नन्दा!"

पाठक नन्दा को भूले न होंगे। यह सचमुच नन्दा थी। बिना चन्द्रकला के उससे रामनगर वापस नहीं जाया गया। इससे वह इधर उधर पागलों सी फिरने और भीख माँग कर अपना जीवन निर्वाह करने लगी थी। उसे यह स्वप्न में भी खयाल न था कि चन्द्रकला से उसकी कभी भेंट होगी।

अपना नाम सुनकर वह चौंक उठी। गीत बिना पूरा हुये ही खतम हो गया। वह सोचने लगी—चन्दो के सिवाय मुझे नन्दा नन्दा कह कर और कौन पुकार सकता है। हे भगवान! मुझे मेरी चन्दो से मिलाओ। उसके भी मुंह से निकल गया—"चन्दो!"

"हाँ मैं ही हूँ।'

नन्दा ने देखा कि पेड़ की जड़ के पास एक काली डरावनी मूर्ति बैठी है। चितवन से वह चन्द्रकला जान पड़ती थी। नन्दा दौड़ कर उससे लिपट गई। दोनो एक दूसरे से लिपट कर खूब रोईं। रोते रोते दिन डूब गया। पेड़ पत्ते खेत सब रोने लगे, पर इस रुदन में एक प्रकार का आनन्द भी था। ये वियोग के नहीं, मिलन के आंसू थे। चन्द्रकला को भूख प्यास सब भूल

गई । उसकी थकावट जाती रही । उसने कहा —"नन्दा ! अभी तक तू जीती है ।"

नन्दा बोली—पहले यह बता कि तेरी यह दशा कैसे हुई, तू काली क्यों होगई ?

चन्द्रकला ने अपनी सारी कथा कह सुनाई । सुनते २ नन्दा का गला भर आया । उसका कलेजा चन्द्रकला को चिपटा कर भेंटने के लिये बाहर निकला पड़ता था । उसके रोम २ कहने लगे—हमारा जीवन निरुद्देश्य नहीं है । संसार की सारी सम्पत्ति से भी अमूल्य चन्द्रकला आज हमको फिर मिल गई । चन्द्रकला को तो ऐसा जान पड़ा, मानों उसके स्वामी माता सब कोई मिल गये ।

रात बहुत ज्यादा होगई थी । दोनों दिन भर की भूखी प्यासी और थकी थीं, एक दूसरे से लिपट कर उसी पेड़ तले सोगईं ।

चौबीसवां परिच्छेद

—— :•: ——

नगीना की माँ

उस रात को सुखबिलास जब नगीना के यहाँ गया तो उसके मकान में ताला बन्द पाया । उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ । इस अपरिचित शहर में वह किसके यहाँ गई और क्यों गई यही वह बड़ी देर तक सोचता रहा । फिर उसने सोचा—"किसी बदमाश ने बाहर से तो ताला नहीं बन्द कर दिया ?" पर ताला तोड़ कर अन्दर का हाल जानने का उसको साहस न हुआ । यह काम गैर कानूनी था और एक बैरिस्टर होते हुए इसे वह कैसे कर सकता था ।

सड़क पर एक लड़का टहल रहा था । वह वेश्याओं के के घरों में अकसर जाता था । जरूरत पड़ने पर बाजार से पान और फूल की मालाएँ आदि भी ला दिया करता था । सुखबिलास को पहचान कर वह बोला —"बाबू जी, कुछ इनाम दो तो बीबी का पता बताऊं ।"

सुखबिलास ने चवन्नी निकाल कर उसके हाथ में रख दी और कहा—"पता जल्दी बता ।" लड़का बोला—"बीबी ने एक नया पंछी फँसाया है ।"

सुखबिलास ने आश्चर्य्य से पूछा—किसे ?

लड़का—कुछ और इनाम दो तो बताऊं।

सुखबिलास ने जेब से निकाल कर उसके हाथ पर दो आने पैसे और रख दिये।

लड़का बोला—एक राजा साहब के यहां गई हैं, माँ बेटी दोनों गई हैं, रात दिन वहीं रहती हैं, खूब रकम काट रही होंगी।

सुखबिलास ने कुछ उत्तेजित होकर कहा—बेवकूफ ! साफ साफ बता ! किस राजा के यहाँ गई हैं ? यहां आती हैं या नहीं।

लड़का—आपने छै आना तो इनाम ही दिया, इतने बड़े रईस होकर एक रुपया भी नहीं दिया, कैसे बताऊं, बात भूली जा रही है ?

सुखबिलास ने कहा—"अच्छा पैसे वापस कर, रुपया देता हूँ।"

लड़का—मेरे हाथ से आप पैसे ले लेंगे ?

सुखबिलास बातें जानने के लिये बहुत उत्सुक हो रहा था। लड़के के हाथ पर रुपया रखकर कहा—बोल, बोल जल्दी।

लड़के को इसके सिवाय कि वे एक राजा के साथ गई हैं और कोई खबर नहीं थी। उसने कहा—"जैसी तुम्हारी

मोटर है वैसी ही राजा साहब की भी मोटर थी। बीच में बीबी को बैठाल कर जिधर से तुम आते हो उधर ही ले गये हैं।"

यह कहकर लड़का फिर कुछ इनाम की इच्छा करने लगा।

"बस इतना ही था और कुछ जानता है ?"—सुखबिलास ने पूछा।

लड़का बिना कुछ उत्तर दिये हुए एक गली में घुस गया। सुखबिलास आगे बढ़ा। वह बहुत उदास होगया था और सोच रहा था—"सिवाय अपनी विवाहिता स्त्री के और जितनी औरतें होती हैं, सब अपने मतलब के लिए प्यार करती हैं, रुपया पैसा लेकर दगा देती हैं। कम से कम इस नगीना को मैं ऐसी नहीं समझता था। इसी की वजह से मेरा पुरानी नगीना से झगड़ा हुआ और इसने मुझे कहीं का न रखा।"

उस दिन सुखबिलास रानी के पास गया। नगीना ने रानी का शृंगार किया था। वह बहुत सुन्दर मालूम पड़ रही थी। उसकी मुस्कराहट में अजीब जादू था। उसे देखकर सुखबिलास ने मन ही मन कहा—"अहा ! मैं कितना निर्दयी हूँ। इस भोली भाली सती नारी की कदर करनी मुझको नहीं आती। यह मुझको अपना तन मन सब सौंपे हुए है और मैं इसकी परवाह तक नहीं करता, सचमुच मैं नीच हूँ।"

पति के बर्ताव से रानी को ऐसा जान पड़ा मानों उसके शृंगार का असर उस पर पड़ गया; पर आज जो वह उसके

अनुकूल जान पड़ रहा था उसका मुख्य कारण यह था कि वह अपनी प्रेमिका के यहाँ से उपेक्षित होकर लौटा था।

इस प्रकार कुछ दिन बीते। किन्तु तिरस्कृत होकर भी सुखबिलास नगीना को भूल नहीं सका। इसलिये एक दिन दोपहर को वह उसके मकान के नीचे से इस खयाल से निकला कि शायद दिन को वह वापस आजाती हो। उसने सोच रखा था कि भेंट हो जायगी तो जूतों से उसकी खबर लूंगा, पर उस दिन भी ताला उसी प्रकार बन्द था।

सुखबिलास निराश होकर आगे बढ़ा। गली से निकलता हुआ वही लड़का उसे दिखाई पड़ा। उसे बुला कर सुखबिलास ने उससे पूछा—"क्यों? बे! कुछ और जानता है, इस घर में वे कभी आती हैं या नहीं?"

लड़का बोला—बाबू जी आपने जो पैसे दिये थे वह तो सिर्फ सिगरेट में ही उड़ गये।

सुखबिलास को गुस्सा आगया। वह बिगड़ कर बोला—बेवकूफ, नालायक, गधा, दूर हो यहाँ से। जो पूछता हूँ वह नहीं बताता, मज़ाक करता है। जानता है मैं कौन हूँ?

लड़का सिटपिटा गया। उसे डरा हुआ देखकर सुखबिलास का गुस्सा कुछ कम हुआ, वह बोला—"पहले जो पूछता हूँ, ठीकठीक बता, उसके बाद जो मांगेगा इनाम दूंगा।"

लड़का बोला—"नगीना जान को तो मैंने नहीं देखा पर उसकी माँ रोज शाम को आती है और उसकी जगह पर वही

बैठती है। लोग बुढ़िया को देख कर हंसते हुए चले जाते हैं। लेकिन इसकी उसको परवाह नहीं है। मैं सुनता था कि बुढ़ाई में अक्ल मारी जाती है पर अब देख भी लिया।"

सुखबिलास लड़के को एक चवन्नी देकर चला गया। लड़का जोर से चिल्लाकर कहने लगा—"बाबू जी, अब शाम को आओगे न?"

शाम को सुखबिलास आया। बुढ़िया बैठी थी और ऐसे बैठी थी मानों उसी का इन्तिजार कर रही हो।

सुखबिलास ने आते ही कहा—"तुम लोग बड़ी दगाबाज़ और बड़ी ही बेशर्म हो।"

बुढ़िया ने जवाब दिया—ये दोनों गुण तो वेश्याओं को बड़े भाग्य से मिलते हैं पर मेरे दिल में तुम्हारी कुछ ऐसी मुहब्बत हो गई है कि बिना तुम्हें देखे रहा ही नहीं जाता, आज कई दिन से बैठी आँखें फोड़ रही हूँ, तब कहीं दिखाई पड़े हो।

सुखबिलास कुछ आश्चर्य्य में आकर बोला—क्या तू फिर से यह पेशा शुरू करने वाली है?

बुढ़िया—संसार में सब पेशे सब उम्र में किये जा सकते हैं; पर यह पेशा सिर्फ जवानी में ही हो सकता है। रूप और जवानी की दूकान मैं कैसे खोल सकती हूँ?

सुखबिलास—गनीमत है।

बुढ़िया—मगर इस उम्र में मैं दलाली कर सकती हूँ और दलाली के लिये यह उम्र मशहूर भी है।

सुखबिलास—समझ गया, कहेगी कि कुछ रुपया लाओ तो नगीना से मिला दूँ। यही दलाली न! उस नालायक का मैं मुँह तक नहीं देखना चाहता!

बुढ़िया—उसका मुँह तो तुम दुर्बीन लगा कर देखो तब भी न दिखाई पड़ेगा, वह तो तुम्हारे हाथ से गई, मैं जूठे माल की दलाली नहीं करती?

सुखबिलास—फिर किस बात की दलाली?

बुढ़िया—जिस राजा के साथ वह गई है, उसी की एक छोटी बहिन है, अभी उसका ब्याह नहीं हुआ, वह इतनी खूबसूरत है कि चिड़िया भी देखे तो उड़ना भूल जाय।

सुखबिलास—तो।

बुढ़िया—मैंने उस राजदुलारी से तुम्हारी इतनी तारीफ की कि वह तुम्हारे ऊपर आशिक हो गई। अब कुछ दिलवाओ तो उससे मुलाकात करवा दूँ।

सुखबिलास—क्या लोगी?

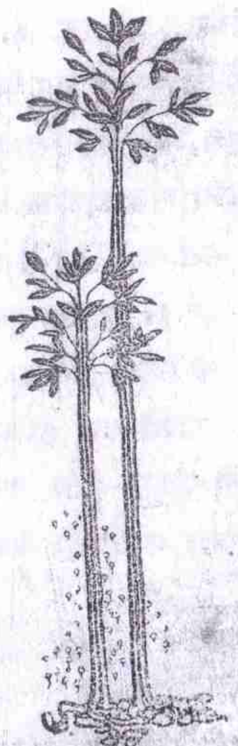
बुढ़िया—लिख दो कि तुम मुझ को अपनी माँ समझोगे और अपनी हैसियत के मुताबिक मुझे खर्च करने के लिये रुपया दोगे।

"यह कौन बड़ी बात है—" कहते हुए सुखबिलास ने जेब

से फाउन्टेन पेन और कागज निकाल कर बुढ़िया के कहने के मुताबिक लिख कर उसको दे दिया और पूछा—"अब मैं कब आऊँ?"

बुढ़िया—परसों शाम को, वह यहाँ तुम्हारा रास्ता देखती मिलेगी।

सुखबिलास—बहुत अच्छा, बहुत अच्छा, तुमको मेरी माँ होना था, वेश्याओं की माँ तुम्हें भगवान ने फिजूल बनाया!



पच्चीसवां परिच्छेद

विवाह की बात-चीत

धीरे धीरे मोहनदास को भी पता चल गया कि उनका लड़का वेश्या गामी है। यह सुनकर बुढ़ाई अवस्था में उनको जो दुःख हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। लड़के के सुधार का कोई तरीका न देख कर उन्होंने रानी के नाम कुछ जायदाद लिख देना और जीते जी बेटी का ब्याह करदेना मुनासिब समझा। आज वे और श्यामसुन्दर बैठे इसी विषय पर बातें कर रहे हैं। उनका ख्याल था कि श्यामा के लिये श्यामसुन्दर से अच्छा दूल्हा नहीं मिल सकता, इसलिये उससे वे श्यामा के साथ ब्याह करने की प्रार्थना कर रहे थे और श्यामसुन्दर राजी नहीं हो रहा था। बड़ी देर की बहस के बाद मोहनदास ने पूछा—"तो क्या लोगों का यह ख्याल कि तुम श्यामा को प्यार करते हो गलत था?"

श्यामसुन्दर—नहीं।

मोहनदास—फिर?

श्यामसुन्दर—मेरी स्त्री मेरी तलाश में है?

मोहनदास—कैसे मालूम?

श्यामसुन्दर—एक अखबार में काशी की आर्य्य-समाज में उसके होने की बात छपी थी। वह अखबार मुझे देर से मिला, इसलिये मैं देर से वहाँ पहुंचा भी। पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह एक रात पहिले वहाँ से कहीं चली गई, दूसरे दिन उसकी बहुत तलाश की गई पर कहीं पता नहीं चला।

मोहनदास—इससे यह तो नहीं साबित होता कि वह तुम्हारी तलाश में है, मुमकिन है किसी गैर आदमी के साथ निकल गई हो।

श्यामसुन्दर ने जेब से निकालकर मोहनदास के हाथ में वह चिट्ठी दे दी जिसे चन्द्रकला काशी के विधवा आश्रम में छोड़ गई थी। उसमें स्पष्ट लिखा था कि वह अपनी एक मात्र अभिलाषा, पति-दर्शन के लिये जा रही है। मोहनदास चुप हो गये। थोड़ी देर में वे बोले—"एक बात तो तुम कर सकते हो?"

श्यामसुन्दर—क्या?

मोहनदास—तुम श्यामा से विवाह कर लो, यदि तुम्हारी स्त्री मिल गई तो उसको भी स्वीकार कर लेना, श्यामा की बड़ी बहिन होकर तुम्हारे घर में रहेगी। इतने दिनों तक साथ रहने से मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि स्त्रियों के मामले में तुम्हारे जैसा सच्चा आदमी शायद इस संसार में कोई नहीं है। इसी

लिये और भी अनुरोध कर रहा हूँ। तुम्हारे हाथ में अपनी बेटी को सौंप कर मैं निश्चिन्त होकर मरूँगा।

श्यामसुन्दर—यदि यही बात है तो आप की यह आज्ञा मुझे शिरोधार्य्य है।

उसी समय कुमारी श्यामा ने वहाँ प्रवेश किया। लज्जा से श्यामसुन्दर की आँखें नीची होगईं। मोहनदास बोले—बेटी को भी यह शुभ संवाद दे देना चाहिए।

श्यामा—क्या?

मोहनदास—आज यह तय हो गया कि तुम्हारा और श्यामसुन्दर का विवाह होगा।

श्यामा को रोमाञ्च हो आया, उसके होठों पर मुस्कुराहट की एक क्षीण रेखा दौड़ गई पर दूसरे ही क्षण उसका चेहरा गम्भीर हो गया। उसने बड़े विनम्र भाव से उत्तर दिया—"सुन्दर के साथ ब्याह न करने से मैं कह नहीं सकती कि मुझे कितना दुःख होगा, पर पिता जी मुझे क्षमा करो इस समय मैं तुम्हारी आज्ञा पालन करने में असमर्थ हूँ।"

मोहनदास ने आश्चर्य से पूछा—क्यों क्या हुआ?

श्यामा—आप नगीना की कथा सुन ही चुके हैं।

मोहनदास—हाँ।

श्यामा—वह काशी के प्रसिद्ध पंडित सुधानिधि शास्त्री की विधवा पुत्री है, भाई साहब उनके मुकदमें में काशी गये थे

वहाँ से कुछ वह बहकी और कुछ ये बहका लाये। और यहाँ वह एक प्रकार से वेश्या होकर रहती है।

मोहनदास—जानता हूं।

श्यामा—इधर कई दिनों से मैं और रानी दोनों मिल कर उसे वेश्यावृत्ति छोड़ कर पुनर्विवाह कर लेने के लिये समझा रही हैं। इस पर उसने कहा है कि यदि कोई कुलीन ब्राह्मण उसके साथ ब्याह करने पर राजी हो जाय तो कदापि वेश्या नहीं बनेगी।

मोहनदास—तो।

श्यामा—तो हम लोगों ने यही सोचा है कि सुन्दर के साथ उसका ब्याह करा दिया जाय, सुन्दर से बढ़ कर कुलीन ब्राह्मण और कहाँ मिल सकता है?

श्यामसुन्दर ने चौंक कर कहा—हरगिज नहीं, मैं वेश्या के साथ ब्याह नहीं कर सकता और करूँ भी तो मुझे अधिकार नहीं है क्योंकि मेरी स्त्री मेरी तलाश में है, जीवित है।

श्यामा—और मेरे साथ ब्याह करने का तुम्हें अधिकार था?

श्यामसुन्दर—नहीं, पर एक तो मैं तुम्हें हृदय से चाहता हूँ दूसरे तुम्हारे पिता जी ने तीव्र अनुरोध किया इससे मुझे यह बात माननी पड़ी।

श्यामा—पिता जी का अनुरोध मानोगे और मेरा नहीं।

श्यामसुन्दर—बिना अपनी विवाहिता पत्नी की अनुमति लिये वेश्या को कैसे ग्रहण कर सकता हूँ ?

श्यामा—फिर वही बात, मुझे कसे ग्रहण करते ?

श्यामसुन्दर—यह तय हो चुका था कि मिल जाने पर मेरी पत्नी तुम्हारी बड़ी बहिन होकर रहेगी और मुझे पति कहने का उसको भी उतना ही अधिकार होगा जितना तुमको।

श्यामा—यह बात मैं नगीना से पहले ही तय कर चुकी हूं।

परदे की आड़ से रानी मुस्करा रही थी। श्यामसुन्दर ने मोहनदास की उपस्थिति का खयाल न करके जोर से कहा—वाह ! राना साहब वाह ! अपनी बला अपने ड्राइवर के सिर मढ़ दी।

रानी भीतर खिसक गई। श्यामा ने कहा—रानी इस बात पर तैयार है कि नगीना उसकी सगी सौत होकर इस घर में रहे, पर नगीना को यह बात मंजूर नहीं है। वह तो मेरी ही तरह तुम्हारे प्रेम की प्यासी है।

श्यामसुन्दर—तो तुमको भूल जाना पड़ेगा।

श्यामा—जरूरी बात है।

श्यामसुन्दर—यह नहीं हो सकता।

श्यामा—नहीं हो सकता तो इसका यह मतलब है कि तुम मुझे प्यार नहीं करते हो।

श्यामसुन्दर—तुम परीक्षा ले सकती हो।

श्यामा—परीक्षा ही तो ले रही हूँ, मुझे प्यार करते हो तो मेरी बात मानो। बिना कारण किसी की बात को मान लेना ही उसको प्यार करना है।

श्यामसुन्दर—इस परीक्षा में तो मैं तुमको खो बैठूंगा।

श्यामा—खो बैठोगे तो क्या हुआ, परीक्षा में पास तो हो जाओगे।

श्यामसुन्दर चुप हो गया। बड़ी देर तक वह न जाने क्या क्या सोचता रहा। फिर यकायक बोल उठा—"अच्छी बात है, मैं वेश्या के साथ ब्याह करने को तैयार हूं। वेश्या के साथ ब्याह करना मेरा धर्म भी है। अनाथिनी स्त्रियाँ ही तो वेश्या होती हैं। मेरी परिणीता पत्नी भी दर दर की भिखारिणी होकर फिर रही है, मैं उसकी रक्षा को नहीं पहुंच सकता यह मेरा दोष है, ऐसी दशा में उसके चरित्र पर धब्बा लग जाय तो भी उसे स्वीकार करना मेरा कर्त्तव्य होगा, कौन जाने मेरे सामने वह किस वेश में आवे। वेश्या का उद्धार करके मैं उसी के समान एक असहाया नारी का उद्धार करूँगा फिर इसके सिवाय और कोई काम नहीं है जिसको करके मैं तुम्हारे प्रेम का इजहार दे सकूँ। इसलिये मुझे सब स्वीकार है, श्यामा तुम भी क्या कहोगी कि किसी ने तुम्हें प्यार किया था।"

मोहनदास ने कहा—बेटी, यह काम उचित नहीं हो रहा है, एक वेश्या के लिये इतना बड़ा त्याग करना ठीक नहीं है।

श्यामा—त्याग नहीं है, पिता जी! यह समाज सुधार की नींव डालना है। आपने भी तो ऐसे ही काम के लिए किसी समय में अपने सब सुखों की बलि कर दी थी। मेरी रगों में भी तो आप ही का खून जोश मार रहा है। स्त्री के प्रति स्त्री का क्या कर्त्तव्य है? संसार को इसको एक मिसाल देने का मुझे मौका दीजिए।

मोहनदास खिड़की से बाहर पेड़ पर बैठी एक चिड़िया की तरफ देखने लगे। एक एक करके श्यामा और श्यामसुन्दर दोनों अपने अपने कमरों में चले गये।

छब्बीसवां परिच्छेद

भाई बहिन

निश्चित समय पर सुख बिलास नगीना के मकान के नीचे आ खड़ा हुआ। बुढ़िया उसकी प्रतीक्षा में बैठी मुस्करा रही थी। सुख बिलास ने कहा—"जान पड़ता है आज तुम अपना वादा पूरा करोगी।"

बुढ़िया बोली—वादा पूरा करने में अब क्या रहा है, पर तुमको मकान के अन्दर नहीं आने दूंगी।

सुखबिलास—क्यों।

बुढ़िया—तुमने मुझको माँ नहीं कहा।

सुखबिलास—क्यों, माँ कैसी हो?

बुढ़िया—तुमने अपनी इस बूढ़ी माँ को प्रणाम नहीं किया।

सुखबिलास हाथ जोड़ कर—अब सही, प्रणाम माँ!

बुढ़िया—पैर छुओ।

सुखबिलास ने बुढ़िया के पैर छुए।

बुढ़िया बोली—अहा हा हा हा! सारा ज़माना खुदगर्ज होगया है, बेटा! तुम अपनी माँ का पैर छू रहे हो या अपने पर्देनशीन दिलदार का।

सुखबिलास जबानी जमा खर्च में पिछड़ने वाला व्यक्ति नहीं था, बोला—तुम्हारा, अपनी माँ का।

बुढ़िया—अगर तुमको राजकुमारी न मिले तब भी मेरे पाँव छुओगे।

सुखबिलास—छूना तो नहीं चाहिये ?

बुढ़िया—क्यों ?

सुखबिलास—क्योंकि जिस शर्त पर मैं ने तुमको अपनी माँ बनाया है जब तक वह पूरी न हो जाय मुझे अधिकार है कि मैं तुम्हारे पाँव स्पर्श करूं चाहे नहीं।

बुढ़िया ने मुँह मटका कर कहा—बड़ा कानूनी बेटा है। खैर, अन्दर जा। नई नवेली राज कन्या तेरा रास्ता देख रही है।

सुखबिलास अन्दर पहुँचा। कमरे में जगमग प्रकाश हो रहा था। पलँग पर दरवाजे की तरफ पीठ किये वास्तव में एक परम सुन्दरी युवती बैठी थी। पीठ पर काले केश लहरा रहे थे। रेशमी महीन वस्त्रों पर सोने का काम चमक रहा था। सुखबिलास मन्त्र-मुग्ध की तरह बड़ी देर तक खड़ा यह सौन्दर्य देखता रहा। उस समय उसका हृदय कह रहा था—इसने तो दोनों नगीना को मात कर दिया, बुढ़िया वाकई में मेरी माँ होने लायक है।

जब सुखबिलास और आगे बढ़ा तो युवती उठ कर खड़ी होगई और बोली—आइए, तशरीफ रखिये।

सुखबिलास के कानों में एक परिचित स्वर सा गूँज उठा। उसने युवती को गौर से देखा और चौंक कर कहा—"कौन ? श्यामा, बहिन श्यामा ! तुम यहाँ कहां ? मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ?"

तिरस्कार पूर्ण दृष्टि से भाई की तरफ देखते हुये श्यामा ने उन्हीं के शब्दों को दुहरा दिया—"कौन ? भाई सुखबिलास ! तुम यहां कहां ? मैं स्वप्न तो नहीं देख रही हूँ !"

सुखबिलास चुप हो गया। श्यामा भी चुपहो गई। कुछ देर तक लज्जा से शिर नीचा किये दोनों एक दूसरे के सामने खड़े रहे। अनायास सुखबिलास के मुँह से निकल गया—"बहिन, घर में तुमको किस बात की कमी थी जो यहां आई हो ?"

श्यामा ने उसके शब्दों को फिर दुहरा दिया—भाई, घर में तुमको किस बात की कमी थी जो यहाँ आए हो ?

सुखबिलास—जानती हो, यह वेश्या का घर है ?

श्यामा—जानते हो, यह वेश्या का घर है ?

सुखबिलास—मैं तो नीच, पापी, नालायक, वेश्या-गामी हूँ।

श्यामा—मैं वेश्या हूँ।

सुखबिलास—क्यों ?

श्यामा—जब भाई वेश्यागामी होंगे तो बहिनों को वेश्या बनना ही पड़ेगा, नहीं तो वेश्याएँ आवेंगी कहां से ?

सुखबिलास का हृदय उमड़ आया। लज्जा और ग्लानि से उसका सिर और भी नीचा होगया। इतनी सी बात भी उसकी समझ में न आई थी कि विश्व के स्त्री पुरुषों में जो सब से पवित्र सम्बन्ध है वह भाई बहिन का सम्बन्ध है। उसने कहा—"बहिन श्यामा! क्षमा करो। सैकड़ों पुस्तकें पढ़ कर जो ज्ञान नहीं प्राप्त हो सका था वह आज तुमने बात की बात में दे दिया। अब बहुत लज्जित न करो। चलो, घर चलें?

तुम्हें क्षमा करने का अधिकार मुझको नहीं है?

सुखबिलास—हाँ, किसको है?

श्यामा—रानी को!

सुखबिलास—अच्छा चलो, घर पहुँच कर रानी के पैर पकड़ूँगा?

श्यामा—रानी को लेकर यहाँ आओ और दोनों मिलकर चलने के लिये कहो तो चल सकती हूँ।

सुखबिलास भागा भागा घर आया। उसको घबराया देख कर रानी को आश्चर्य्य नहीं हुआ क्योंकि उन सबों ने पहले ही से ऐसा सोच रखा था। सुखबिलास को उचित शिक्षा देने की श्यामसुन्दर ने जो तरकीब बतलाई थी वह आज कारगर हो गई। सुखबिलास ने कहा—"हृदयेश्वरी! एक बात कहूँ मानोगी?"

रानी ने नजाकत से मुस्कराते हुये कहा—तुम्हारी हृदयेश्वरी वह सामने बैठी है?

सुख बिलास ने देखा कि सामने नगीना बैठी पान लगा रही है। वह और भी आश्चर्य्य चकित होकर बोला—"नगीना तुम यहाँ कैसे? तुम तो किसी राजा के साथ गईं थीं।

नगीना ने दूसरी तरफ मुँह करके कहा—राजा नहीं राना, मेरे राना साहब सामने खड़े हैं। इन्हीं पर मैं मुग्ध हूँ और तुम मुझ पर मुग्ध हो। इसलिये इसमें सन्देह नहीं कि तुम इन पर और भी अधिक मुग्ध होगे।

अब सुखबिलास की समझ में कुछ कुछ आया। हाथ जोड़ कर रानी से उसने कहा—"रानी! मेरी रानी! अपराध क्षमा करो। अभी तैयार होकर चलो। श्यामा को लाना है। बिना तुम्हारे चले वह नहीं आयेगी।"

ये बातें हो ही रहीं थीं कि बुढ़िया और श्यामा दोनों आ पहुँची। बुढ़िया मुँह मटका कर कहने लगी—"बेटा! सुख बिलास इधर देखो, तुम्हारी माँ आ पहुँची, लो पाँव छुओ।"

श्यामा दूसरी तरफ देखने लगी, रानी मुस्कराने लगी और नगीना ठट्ठा मार कर हँसने लगी।

सत्ताइसवां परिच्छेद

विपत्ति का अन्त

जो लोग यह कहते हैं कि प्रातःकाल नित्य नवीन मालूम पड़ता है वे प्रयाग का प्रातःकाल देखें तो चक्कर में पड़ जायँगे। हलवाइयों की दूकानों से धुवें के बादल उठते हैं जिनके पास जाते ही दम घुटने लगता है, सड़कों पर झाड़ू लगने से इतनी गर्द उठती है कि चलने वाला कितना ही स्वच्छ वस्त्र क्यों न पहने धूल का एक पुतला जान पड़ने लगता है। मल मूत्र की गाड़ियाँ प्रातःकालीन वायु में दुर्गन्ध भरती हुई मन्द गति से चारों तरफ जाती हुई दीख पड़ती हैं। ऐसे समय में जो लोग अपने घरों से निकलते हैं वे या तो गङ्गा के प्रेमी होते हैं या देहात से आये हुए लोग। कदाचित इसी से यहाँ के वैद्य लोग वायु सेवन के लिये शाम के समय को सबसे अच्छा बताते हैं। पर आज प्रयाग में एक विचित्र प्रकार का प्रातःकाल हुआ है। सड़क पर फूल मालाएँ लिये हुए कुछ लोग एक ही तरफ को जाते हुए नज़र आरहे हैं जिनसे कुछ सुगन्ध फैल रही है। इन लोगों में इस प्रकार बातें हो रही हैं।

एक—पहले से आशिक रहा होगा। नहीं तो वेश्या के साथ शादी करने पर तैयार न होता।

दूसरा—नहीं, मैंने सुना है कि उसका ब्याह मोहनदास वकील की परम सुन्दरी कन्या श्यामा से होने वाला था।

तीसरा—तब तो जरूर तारीफ की बात है।

चौथा—मेरा तो खयाल यह है कि वेश्याओं के साथ ब्याह करने में जो मज़ा है वह कुमारियों के साथ ब्याह करने से कदापि नहीं मिल सकता।

दूसरा—शाबास पट्ठे, अगर तेरी स्त्री आवे तो पहले उसे वेश्या बना देना फिर अपने घर में बुलाना।

पाँचवा—सबेरे का समय है, राम का नाम लो, क्या बकते हो?

छठा कुछ कहने ही वाला था कि, पों पों करके पीछे से दौड़ती हुई एक मोटर आई। मोटर में दो सुन्दर युवक बैठे जा रहे हैं। मोटर के पीछे फटे पुराने और मैले कपड़े पहने दो स्त्रियाँ दौड़ी चली जा रही हैं। एक अधेड़ है और दूसरी बिल्कुल युवा।

यह दृश्य देखकर उन आदमियों में से एक बोला—दिन भर भीख माँगेंगी, रात भर कहीं जाकर मौज करेंगी।

दूसरा—यार जो छोटी सी है मुझे मिल जाती तो रोज गङ्गा नहाता।

तीसरा—मैं मोटर में होता तो खड़ी करके एक को जरूर रबटा लेता।

पर उन स्त्रियों को यह बातें सुनने का समय नहीं था। वे जी छोड़कर दौड़ी जा रही थीं और उनमें इस प्रकार बातें भी होती जा रही थीं।

"नन्दा! यही हैं।"

"हाँ बेटी चन्दो, यही हैं।"

"तू ने खूब पहचाना है?"

"हाँ, हाँ जब कारिख में लिपी पुती तुझको पहचान लिया तो उनको क्यों न पहचानूँगी। वे तो बिलकुल वैसे ही हैं।"

"नन्दा, मुझे भी जान पड़ता है कि वही हैं।"

"हाँ! हाँ! वही हैं, चुप चाप दौड़ी चल।"

अब पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि इन दोनों मलिन वसना स्त्रियों में एक तो हमारे उपन्यास की नायका चन्द्रकला है और दूसरी उसके सुख दुःख की एक मात्र साथिन नन्दा। आखिरकार खोजते खोजते श्यामसुन्दर को दोनों ने पा लिया। मोटर में वही जा रहे हैं, उनकी बगल में सुखबिलास बैठे हैं जिनसे इन स्त्रियों का कोई मतलब नहीं है। दोनों जी छोड़ कर इसलिये दौड़ी जा रही हैं कि अचानक प्रगट हुए इष्ट देवता यदि फिर अन्तर्धान हो जायँगे तो बेचारी कहाँ ढूढ़ेंगी।

यहाँ यह भी बतला देने की आवश्यकता है कि एक सार्वजनिक सभा में श्यामसुन्दर और नगीना का विवाह होने जा रहा है। और किसी जन समुदाय में साहस न होने के कारण यह काम चौक की आर्य्य-समाज ने अपने हाथ में लिया है। पर यह केवल आर्य्य-समाज का काम नहीं है। इसमें सब सम्प्रदाय के लाग शामिल होंगे। जो लोग फूल माला लिये आ रहे हैं वे भी इसी जलसे में शामिल होने आरहे हैं और विवाह हो जाने के बाद जोड़ी को फूल मालाएँ पहनाएँगे।

मोटर खड़ी हो गई। श्यामसुन्दर और सुखबिलास उतर कर आगे बढ़े, नन्दा और चन्द्रकला भी उनके पीछे पीछे चलीं।

सभा भवन के फाटक पर स्वयं सेवक लोग हिन्दू धर्म की जय जयकार करते हुए हर एक का स्वागत करने में तत्पर थे। श्यामसुन्दर और सुख बिलास के बाद उन्होंने नन्दा और चन्द्रकला को आदर के साथ ले जाकर स्त्रियों में बैठाल दिया।

उधर विवाह का कार्य्यक्रम आरम्भ हुआ और सुन्दर २ वस्त्रों से सुसज्जित स्त्रियाँ नन्दा और चन्द्रकला को दुतकारने लगीं। जिधर वे बेचारी गईं उधर ही उनको सुनना पड़ा—"यहाँ से हट जाओ, हमारे पास से दूर बैठो, कौन जात हो, यहाँ क्यों आई हो बाहर निकल जाओ।" एक स्कूल में पढ़ने वाली लड़की ने सोचा कि बीरता दिखलाने का यह सब से अच्छा मौका है। उसने चन्द्रकला के गले में हाथ लगा

कर उसको धक्का देते हुए कहा—“निकल चुड़ैल ! निकल यहाँ से !”

चन्द्रकला बड़ी निडर और आत्माभिमानिनी नारी थी। ज्यों २ विपत्ति बढ़ी त्यों २ उसके ये गुण बढ़ते गये थे। परिणाम की कोई परवाह न करके लड़की के गाल पर उसने तड़ातड़ तीन चार तमाचे जमा दिये। लड़की चीख मार कर बैठ गई और रोने लगी। ‘प्राण जायँ तो जायँ मेरा सती धरम ना जाये’ गाने वाली स्त्रियाँ भय से थर थर काँपने लगीं और खड़ी होकर इधर-उधर भागने की सोचने लगीं। इस कोलाहल में श्यामसुन्दर और नगीना का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। चन्द्रकला उसी तरफ देख रही थी। श्यामसुन्दर की और उसकी आँखें मिल गईं। आँखें मिलते ही लज्जा से उसका शिर नीचा हो गया, उसका हृदय धड़क उठा। उसके हाथ फटी धोती के अञ्चल का घूँघट बनाने लगे। बगल में खड़ी हुई नन्दा को पहचान कर श्यामसुन्दर ने निश्चय कर लिया कि हो न हो उनकी त्यक्ता पत्नी यही है। नगीना अपने बाप के यहाँ साथ रहने के कारण चन्द्रकला को खूब पहचानती थी। मोहन मन्दिर में आकर उसे यह भी मालूम हो गया था कि श्यामसुन्दर उसका पति है। उसने श्यामसुन्दर से कहा “प्यारे, विवाह की कार्रवाई बन्द करवा दो। तुम्हारी स्त्री आगई है, अब उससे आज्ञा ले लेना आवश्यक है।”

यह सुनते ही श्यासुमन्दर का विश्वास दृढ़ हो गया। वे

उत्तेजित होकर खड़े होगये और बड़ी जोर से चिल्लाकर बोले—“भाइयो और बहनो ! इस समय इस समाज में नगीना से भी अधिक दुःखी, असहाया और तिरस्कृता रमणी आगई है, नगीना की सहायता के लिये तो हज़ारों हाथ निकल पड़ेंगे, पर इस दुःखिनी से कोई पूछेगा भी नहीं कि तू कैसी है। इसलिये मुझे जब समाज के सामने एक आदर्श ही रखना है तो मैं उस पथ की भिखारिणी को क्यों न सनाथ करूँ।”

यह कहने के बाद श्यामसुन्दर वेदी से उठा और चिथड़ों में लिपटी मैली कुचैली चन्द्रकला का हाथ पकड़कर बोला—“मुझे पहचानती हो ?”

चन्द्रकला स्वामी के पैरों में लिपट गई और फूट फूट कर रोने लगी। नन्दा की आँखों में भी आँसू उमड़ आये।

अब मोहन दास से न रहा गया। वे उठ कर खड़े हुए और थोड़े में चन्द्रकला का जितना जानते थे उतना परिचय दिया। उसके बाद श्यामा ने चिल्लाकर कहा—“हम सीता की कथा पढ़ते हैं पर सीता को कभी देखा नहीं था। आज हमारे बीच में इस युग की सीता आई हैं। अपने राम से मिल रहीं हैं। ईश्वर हम स्त्रियों में दिनों दिन इसी प्रकार का साहस, धैर्य्य, निर्भयता, आशा और कष्ट सहन की शक्ति पैदा करे।”

चारों तरफ करतल ध्वनि होने लगी। नगीना ने प्रायश्चित करने का निश्चय किया। अब उसे मालूम होगया कि उसे

क्या करना चाहिए। उसे विवाह से, शोक से, और पुरुषों से, घृणा होगई।

अपने कीमती वस्त्रों को जिन्हें पहने हुए उसे एक घंटे से अधिक नहीं हुआ था। उतार कर कर उसने चन्द्रकला को पहना दिए और खुद ने उसकी मैली कुचैली धोती पहन कर उसे खूब भेंटा और कहा—"जैसे अपने बाप के घर में तुम्हारी सेवा करती थी वैसे ही अब जहाँ भी रहूँगी तुम्हारी दासी होकर रहूँगी। बोलो, मेरी प्रार्थना स्वीकार करोगी? तुम सती हो तुम्हारी सेवा से मैं भी तर जाऊँगी।"

जिस मोटर के पीछे २ नन्दा और चन्द्रकला पागल की भाँति दौड़ रहीं थीं कौन जानता था कि उसी पर बैठ कर वे वापस जायँगी।

समाप्त